

मुद्रक तथा प्रकाशक–
घनश्यामदास जालान
गीताप्रेस, गोरखपुर

सं० १९९२
प्रथम संस्करण ५२५०
सं० १९९४
द्वितीय संस्करण ४०००

मूल्य ।) चार आना

पता–
गीताप्रेस, गोरखपुर।

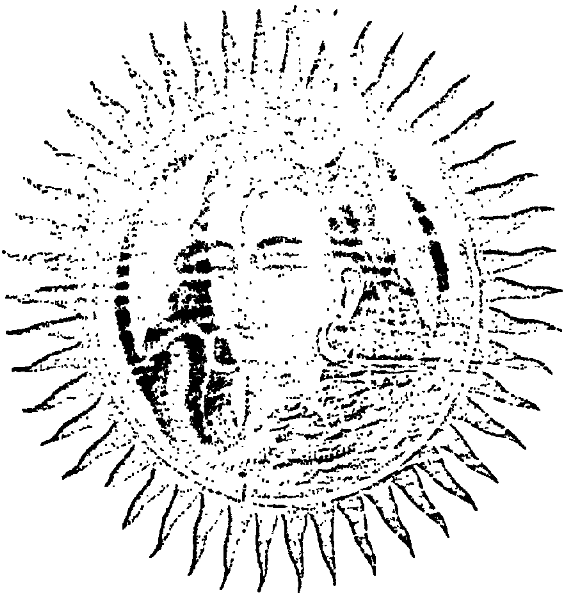
श्रीहरिः

'शिव' का निवेदन

मन तरंगोंका समुद्र है। 'शिव' के मनमें भी अनेक तरंगें उठती हैं, उन्हींमेंसे कुछ तरंगें लिपिबद्ध भी हो जाती हैं और उन्हीं अक्षराकारमें परिणत तरंगोंका यह एक छोटा-सा संग्रह प्रकाशित हो रहा है। इस संग्रहमें पुनरुक्ति और क्रमभङ्ग दोष दिखायी देंगे, तरंगें ही जो ठहरीं! यह सत्य है कि तरंगोंके पीछे भी एक नियम काम करता है और वहाँ भी एक नियमित क्रमधारा ही चलती है, परन्तु उसे हम अपनी इन आँखोंसे देख नहीं पाते। हमें तो हवाके झोंकोंके साथ-साथ तरंगोंके भी अनेकों क्रमहीन और अनियमित रूप दीख पड़ते हैं। सम्भव है, सूक्ष्म दृष्टिसे देखनेवाले पुरुषोंको इस तरंग-संग्रहमें भी किसी नियमका रूप दिखलायी दे। 'शिव' को इससे कोई मतलब नहीं। 'शिव' ने तो प्रकाशकोंके कहनेसे इतना ही किया है कि इधर-उधर बिखरे वाक्योंको एकत्र कर उनपर कुछ शीर्षक बैठा दिये हैं। पाठकोंका इससे कोई लाभ या मनोरञ्जन होगा या नहीं इस बातको 'शिव' नहीं जानता।

श्रीहरिः

विषय-सूची



भगवान् शिव

* श्रीहरिः *

कल्याण-कुञ्ज

हमारा मोह

पुराने इतिहासों, पुराणों और अन्य ग्रन्थोंसे पता लगता है कि किसी जमानेमें मनुष्य प्राप्त भोग-सुखोंको छोड़कर परमात्मसुखके लिये लालायित था। उसने अपने जीवनका उद्देश्य ही मान रक्खा था आत्माको जानना—परमात्माको प्राप्त करना। गर्भाधानकालसे इसीके लिये तैयारी होती थी और जीवनभर इसीकी शिक्षा दी जाती थी। ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास ये चार आश्रम, और ब्राह्मण,

क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र ये चार वर्ण मनुष्यके इस अन्तिम ध्येयकी प्राप्तिके लिये ही बनाये गये थे और इनकी सुव्यवस्थापूर्ण पद्धति मनुष्यको क्रमशः परमात्माकी ओर ले जाती थी। शिक्षाका उद्देश्य ही था मनुष्यको पूर्ण सुखकी प्राप्तिके साधन बतला देना!

× × × ×

समयने पलटा खाया, मनुष्यकी दृष्टि नीचे उतरी, ध्येय पदार्थ नीची श्रेणीका हो गया, अब तो यहाँतक हुआ कि भोगसुख ही जीवनका लक्ष्य समझा जाने लगा। अपना सुख या देशका सुख—जो छोटे दायरेमें है, वह अपने सुखके लिये यत्नवान् है, जो बड़े दायरे-में है वह देशके सुखके लिये चेष्टा कर रहा है, इसके अन्दर भी निज सुखकी इच्छा तो छिपी है ही। फिर उस सुखका स्वरूप क्या है? खूब धन हो, सम्मान हो, सत्ता हो, अधिकार हो, प्रभुत्व हो। इनकी प्राप्तिके लिये चाहे जिस साधनका प्रयोग करना पड़े, चाहे जिस उपायसे काम लिया जाय, झूठ, कपट, छल, द्रोह, हिंसा किसीके लिये रुकावट नहीं, काम होना चाहिये, सफलता मिलनी चाहिये। आश्चर्य तो इसी बातका है कि मरणधर्मा मनुष्य दूसरेको लूटकर, मारकर स्वयं सुख-शान्तिसे (!) जीना चाहता है।

× × × ×

परन्तु क्या किया जाय! विद्यालय, विश्वविद्यालय, आश्रम, मठ, मन्दिर, सभी जगह यही शिक्षा मिल रही है; बस, धनवान् बनो, अधिकार प्राप्त करो, सत्ता लाभ करो, इस लोकका सुख ही सुख है, यहाँका अधिकार ही जीवनका लक्ष्य है; यह न हुआ तो जीवन वृथा

गया। परिणाम प्रत्यक्ष है। आज चारों ओर अधिकारकी लड़ाई शुरू हो रही है, लोगोंके जीवन दुःखमय बन गये हैं; कोई अधिकार-प्राप्तिके लिये व्याकुल है तो कोई अधिकार-रक्षाके लिये। क्या कहा जाय ! हमारा तमाम जीवन ही बाह्य हो गया, बाह्य वस्तुओंके लिये—इन्द्रिय-भोगोंके लिये बिक गया। मांसके टुकड़ोंके लिये चील-कौओंकी-सी लड़ाई होने लगी।

× × × ×

किसी जमानेमें परमात्माकी प्राप्तिके लिये तप होते थे। आज भोगोंकी प्राप्तिके लिये होते हैं ! कभी भगवान्‌के प्रति आत्मसमर्पण होता था, आज भोगोंकी प्रतिमा पूजी जाती है ! कभी देहात्मबोध छोड़कर ब्रह्मात्मबोध किया जाता था; अब ब्रह्मात्मबोधकी अनावश्यकता समझी जाकर उस मार्गके पथिकोंको भी देहात्मबोधकी शिक्षा दी जाती है ! बड़े-बड़े मनीषी, तपस्वी, संयमी पुरुष भी आज भोगोंकी प्राप्ति करने-करानेके लिये जीवनकी और धर्मकी बाजी लगाये बैठे हैं, और इसीको धर्म समझा जा रहा है ! इस भोगपरायणता—इन्द्रियसुखपरताका परिणाम क्या होता है ? मनुष्योंमें राक्षसी भावोंका उदय, द्वेष-हिंसा-प्रतिहिंसाका प्राबल्य, घोर अशान्ति और सुखके नामपर दुःखपूर्ण जीवन-यापन !

× × × ×

इसका प्रत्यक्ष प्रमाण भोगसुख और भौतिक सत्तासामर्थ्यसे सम्पन्न समुन्नत कहानेवाले देशोंकी भीतरी दशा है। परन्तु इस दशाको भी देखना होगा ईश्वराभिमुखी ज्ञानसम्पन्न ऋषि-नेत्रोंसे;

हमने ये नेत्र खो दिये, कम-से-कम हमारे इन नेत्रोंपर जाले छा गये, इसीसे हम विपरीतदर्शी हो रहे हैं । वहाँकी सभी बातें हमें अच्छी लगती हैं चाहे वह बुरी-से-बुरी हों; ऐसा जादू छाया है कि उसने हृदयको ही 'पराया' बना दिया । इसीके परिणामस्वरूप आज हम वहाँके अनाचारमें सदाचार, पापमें पुण्य, स्वार्थान्धतामें देशभक्ति, अवनतिमें उन्नति, अधर्ममें धर्म और पतनमें उत्थानका विपरीत दृश्य देख रहे हैं, और सब ओर उसीके प्रवर्त्तनकी अन्धचेष्टामें तत्पर हैं ।

× × × ×

जहाँ सुख है ही नहीं, वहाँ सुखको खोजना वैसा ही है जैसा तप्त मरुभूमिमें जल समझकर भटकना । भगवान् श्रीकृष्णने तो इस जगत्को 'अनित्य' और 'असुख' अथवा 'दुःखालय' और 'अशाश्वत' बतलाया है । और इसके प्रत्येक पदार्थमें 'जन्म-मृत्यु, जरा-व्याधि' रूप दुःख-दोष देखकर इससे वैराग्य करनेकी आज्ञा दी है और वैसा बनकर ही जगन्नाटकके सूत्रधार भगवान्की आज्ञानुसार अपने-अपने स्वाँगके अनुकूल अभिनय करनेको निष्काम कर्म बतलाया है । आज हम भगवान् श्रीकृष्णकी आज्ञा मानकर लड़ने-मरनेको तो प्रस्तुत हैं परन्तु भोगेच्छा छोड़कर वैराग्य ग्रहण करनेके लिये जरा भी तैयार नहीं । फलस्वरूप निष्काम कर्मयोगके स्थानपर विकर्म—पापकर्म होते हैं—भोगसुखेच्छासे प्रेरित होकर राग-द्वेष-वश किये जानेवाले असत्य, कपट और हिंसायुक्त कर्म पाप न होंगे तो क्या होंगे ? पापका फल दुःख होता ही है; उसीका भोग भी

हम खूब भोग रहे हैं। आश्चर्य और खेद तो यह है कि गीताकी दुहाई देकर आज मनमाने आचरण किये जा रहे हैं।

× × × ×

आज जो कुछ हो रहा है इसके अधिकांशमें न ज्ञान है, न निष्काम कर्म है और न भक्ति है। ज्ञानमें प्रधान बाधा है देहाभिमानकी, सो उसको खूब बढ़ाया जा रहा है। निष्काम कर्मयोगमें प्रधान बाधक है स्वार्थबुद्धि, जिसकी वृद्धिके लिये प्रत्येक सम्प्रदाय और दल जोरोंके साथ संगठित हो रहे हैं, और भक्तिमें प्रधान प्रतिबन्धक है शरणागतिमें कमी—भगवान्‌पर पूर्ण निर्भर न होना, सो यह भी प्रत्यक्ष ही है। सच्चा ज्ञानी, सच्चा निष्काम कर्मी और सच्चा भक्त कभी छल, कपट, दम्भ, असत्य, अन्याय और हिंसा आदिका अवलम्बन नहीं कर सकता।

× × × ×

क्योंकि ज्ञानके साधनमें देहात्मबुद्धिका—शरीरमें 'मैं' बुद्धिका त्याग करना पड़ता है, उसके लिये आत्मा शरीरसे उसी प्रकार अलग है, जिस प्रकार दूसरे शरीरोंसे हमारा शरीर। यह स्थिति प्राप्त होनेपर अर्थात् देहात्मबुद्धिके छूट जानेपर पापकर्म नहीं बन सकते। इसी प्रकार स्वार्थबुद्धिके परित्याग हो जानेपर ईश्वरार्थ किये जानेवाले निष्काम कर्म भी पापयुक्त नहीं हो सकते। और भगवत्-भक्तिमें तो मनुष्य भगवान्‌के शरण ही हो जाता है, उस अवस्थामें उसके दूषित भावोंका त्याग स्वाभाविक ही होता है। जहाँ दुष्कर्म होते हैं, सफलताके लिये शास्त्रविरुद्ध कर्मोंका, पापोंका

आश्रय लिया जाता है, वहाँ ज्ञान, निष्काम कर्म और भक्तिका स्वप्न देखना मोहमात्र है।

× × × ×

इस मोहका भङ्ग होना आवश्यक है, परन्तु हो कैसे? अज्ञानजनित भोगलोलुपताके अन्धकारने हमारे ज्ञानको ढक लिया है और चारों ओरसे इस अन्धकारको और भी घन करनेका अथक प्रयत्न हो रहा है। इस अन्धकारकी घनताको ही ज्ञानका प्रकाश कहा जाता है। मनुष्यकी बुद्धि आज उल्लू और चमगादुरकी दृष्टि-जैसी हो गयी है, जैसे इन पक्षियोंको दिनमें अँधेरा और रात-को प्रकाश दीखता है, वैसे ही हमें भी आज अन्धकारमें ही प्रकाशका भ्रम हो रहा है, इसीसे हम 'कामोपभोगपरायण' होकर सैकड़ों आशाकी फाँसियोंमें बँधे हुए काम-क्रोधादि साधनोंसे 'कामभोगार्थ' 'अन्यायपूर्वक अर्थप्राप्ति' के उपायोंमें लग रहे हैं। मोहने हमें घेर लिया है। अभिमानने हमें अन्धा कर दिया है। लोभने हमारी वृत्तिको बिगाड़ दिया है। मदने हमें उन्मत्त बना दिया है। इसीसे आज हम 'अहंकार, बल, दर्प, काम, क्रोध' का आश्रय लेकर 'सर्वभूतस्थित' भगवान्‌के साथ द्वेष करने लगे हैं। इन आसुरी भावोंका परिणाम नरककी यन्त्रणाएँ और अधम गतिके सिवा और क्या हो सकता है?

× × × ×

उपाय क्या है? उपाय है—भगवदाराधन! जिन लोगोंको भगवान्‌में कुछ भी विश्वास है वे सबकी ऐसी बुद्धि होनेके लिये भगवान्‌से सरल-श्रद्धायुक्त अकृत्रिम प्रार्थना करें। उठते हुए भगवत्-

विश्वासको अपने शुभ आचरण और सच्ची भक्तिके द्वारा फिर जमावें। भगवत्-श्रद्धाके सूखते हुए वृक्षकी जड़को सच्ची निर्भरताकी अश्रु-जल-धारासे सींचें। आप्त वचनोंपर श्रद्धा करें। ऋषि-मुनियोंको भ्रान्त मानना छोड़ दें। जीवनको तप-संयमसे पूर्ण बनाकर भगवत्-कृपाका आश्रय ग्रहण करें। अटल विश्वास तथा परम श्रद्धाके साथ भगवान्‌के चरणोंकी सेवा करें और उनके पवित्र नामका जप करें।

× × × ×

मनुष्यको सावधान होकर यह सोचना चाहिये कि यहाँ सभी भोग-सुख अनित्य हैं, बिजलीकी भाँति चञ्चल हैं। शरीर कच्चे घड़ेके समान अचानक जरा-सी ठेस लगते ही नष्ट हो जानेवाला है, इसलिये भोगोंसे मन हटाकर भगवान्‌में प्रेम करें। भगवान्‌के लिये ही जगत्‌के सारे कार्य करें। जगत्‌के लिये भगवान्‌को कभी नहीं भुलाया जाय। भगवान्‌के लिये जगत्‌को छोड़ना पड़े तो आपत्ति नहीं, परन्तु जगत्‌के लिये भगवान् कभी न छूटें। यदि मनुष्य इस प्रकार निश्चय कर ले तो फिर जगत्‌के छोड़नेकी भी जरूरत नहीं पड़ती, सारा जगत् भगवन्मय ही तो है—

'हरिरेव जगत्, जगदेव हरिः'

कञ्चन, कामिनी और कीर्ति

याद रक्खो ! एक दिन मृत्यु अवश्य होगी, और कब होगी इसका तुम्हें कुछ भी पता नहीं, अभी होश-हवास-दुरुस्त बैठे हो, शायद अगली ही मिनट तुम्हारी मृत्युका काल हो। उस समय तुम्हारे सारे काम ज्यों-के-त्यों धरे रह जायँगे। अभी कामसे तुम्हें पलभरको फुरसत नहीं मिलती, उस समय आप ही सदाके लिये फुरसत मिल जायगी। अभी शरीरके आरामके लिये तुम बड़े सुन्दर महलोंमें मुलायम गद्दोंपर सोते-बैठते हो, उस समय निर्जन वनमें, सियार, कुत्ते और गीधोंसे घिरे हुए डरावने मरघटमें खुली जमीनपर तुम्हारा यह सोने-सा शरीर जलकर खाक हो जायगा। सारे अरमान मनके मनमें रह जायँगे, सारी शेखी चूर हो जायगी, सारी हेकड़ी काफूर हो जायगी, तुम्हारी मदभरी, गर्वभरी और रीसभरी आँखें सदाके लिये मुँद जायँगी।

× × × ×

कैसे निश्चिन्त-से होकर भोगोंमें भटक रहे हो ? चेतो, शीघ्र चेतो ! फिर पछतानेसे कुछ भी नहीं होगा; इस शरीरसे छूटकर जब तुम परलोकमें जाओगे और वहाँ तुम्हारे यहाँके कमाये हुए कर्मोंका भीषण फल सामने आवेगा, तब काँप उठोगे । यहाँके मौज-मजोंमें जिस सुखका अनुभव करते हो, वहाँ उस एक-एक मौजके बदलेमें जो भयानक दण्ड मिलेगा, उसे सुनकर मूर्च्छित होने लगोगे । परन्तु बाध्य होकर मौजका बदला भोगना ही पड़ेगा। इसीसे अभी चेत जाओ । शरीर, मन, वचनसे किसी जीवका अहित न करो, किसीके जीको मत दुखाओ, सबका भला चाहो, भला करो, अपना अहित करके भी दूसरोंका हित करो । निश्चय रक्खो तुम्हारा अहित कभी नहीं होगा । धोखेसे अभी तुम्हें दीखनेवाला अपना अहित परम हितके रूपमें परिणत हो जायगा । सबको परमात्माका स्वरूप समझकर सबकी अहैतुकी सेवा करो; परम कृपालु परमात्माका मन, वाणी और शरीरसे भजन करो; मनसे उनका ध्यान करो, वाणीसे उनका गुणगान करो और शरीरसे—सर्वत्र सबमें उन्हें विराजित देखकर सबकी आदर, प्रेम और उछाहके साथ सेवा करो !

× × × ×

विषयोंसे मनको हटाकर भगवान्में लगाते रहो, विषयोंको विष समझो और भगवान्को दिव्य अमृत ! भगवान्के लिये भगवत्-पूजाके भावसे विषयोंका ग्रहण करना दूषित नहीं है परन्तु कभी भोगबुद्धिसे विषयोंको न चाहो, न भोगो, न उनमें प्रीति करो; श्रीभगवान्को प्राप्त करनेकी जितनी साधनाएँ हैं सबमें वैराग्य और

भजन प्रधान है। जिसके हृदयमें वैराग्य है, वह बड़े-से-बड़ा त्याग सहज ही कर सकता है। त्यागसे सारे सद्गुण आप ही आ जाते हैं। परन्तु वैराग्यके साथ भजनकी आवश्यकता है। संसारके भोगोंसे हटाये हुए मनको साथ-ही-साथ भगवान्‌में लगानेका भी प्रयत्न करना चाहिये।

× × × ×

धन, स्त्री और मान इन तीनोंका मोह छोड़नेकी चेष्टा करो, धनका महत्त्व हृदयसे निकाल दो, दान और सत्कार्यके लिये भी धनसंग्रहकी चेष्टा मत करो। न सत्कार्यकी प्रवृत्तिके लिये ही किसी धनवान्‌से धन माँगकर धनको महत्त्व प्रदान करो। अपने लोभरहित न्यायोपार्जित धनसे यथायोग्य सत्कार्य करो, उस माता लक्ष्मीको भगवान्‌की गृहिणी समझकर भगवान्‌के चरणोंमें भेंट कर दो, तुम तो माँका दिया हुआ प्रसादमात्र ग्रहण करो। माँ लक्ष्मीको कभी भोग्या मत समझो। तुम किसी सत्कार्यमें लगे हो तो जहाँतक हो—विना माँगे मिल जाय, उसी धनसे सत्कार्य करो। धनमें तुच्छ-बुद्धि करो और उसकी आवश्यकताको यथासाध्य घटाते रहो। जिससे तुम्हें किसीसे कभी कुछ भी माँगना न पड़े।

× × × ×

स्त्रीजातिका अपमान न करो, स्त्रीजातिसे कभी घृणा न करो, परन्तु उसे भोग्य वस्तु समझकर उसका अमर्यादित संग भी न करो। तुम कहोगे, हम भोग्य वस्तु नहीं समझते, देवी समझते हैं। वहुत अच्छी वात है! परन्तु मन वड़ा दुष्ट है। वड़े-वड़े

तपस्वी और संयमी पुरुष संगसे विचलित हो जाते हैं। अतएव झूठे अभिमानको छोड़ दो। अपनी कमजोरियोंपर खयाल करके स्त्रियोंसे अलग रहो। धनसे स्त्रीका त्याग कठिन है और स्त्रीकी अपेक्षा मानका। स्त्रीका त्याग केवल अलग रहनेमें ही नहीं है। भोग्यबुद्धिसे स्त्रीका चिन्तन, दर्शन—उसके चित्रका दर्शन भी विकार उत्पन्न करनेवाला होता है। भोग्यबुद्धि अन्दर छिपी रहती है। मनको बहुत टटोलकर देखो—अपना दोष पहचाननेकी इच्छासे गहरी अन्तर्दृष्टि करो, तुम्हें पता लगेगा, स्त्रीके रूपपर, उसके वेश-भूषापर, उसके शब्दोंपर, उसके हावभावपर—तुम्हारे मनमें आसक्ति है। इसी प्रकार स्त्रियोंको भी पुरुषोंसे बचना चाहिये। गुरुभावसे भी एकान्तमें पर-पुरुषसे कभी नहीं मिलना चाहिये। इन्द्रियाँ बड़ी प्रबल हैं। साधन करते-करते संयमसे निकल भागती हैं। फिर इन्हें स्वच्छन्द छोड़नेपर तो कहना ही क्या है?

× × × ×

मान-बड़ाई बड़ी मीठी छुरी है। विषभरा सोनेका घड़ा है। इससे खूब सावधानीसे बचो। बहुत बार मनुष्य मानका त्याग भी मानके लिये ही करता है। अपमानको भी मानकी कामनासे सिर चढ़ाता है। सावधान! मनके धोखेमें मत आओ! सच्चे अमानी बनो! मनुष्य धन और स्त्रीको छोड़ देता है परन्तु मानका त्याग—और उसमें भी शारीरिक मानकी अपेक्षा—मौखिक बड़ाईका त्याग होना बड़ा कठिन है। कीर्तिकी कामनामें बहुत बड़े-बड़े सत्कार्य बड़े सस्ते बेच देने पड़ते हैं। कीर्तिका लोभ न करो—

भगवान्‌का लोभ करो। यह निश्चय रक्खो—यदि तुम्हारा जीवन पवित्र है, तुम्हारे आचरण सर्वथा निर्दोष हैं, तुम्हारे मन-मन्दिरमें भगवान्‌का निवास है और तुम सदा तन-मन-वचनसे सर्वव्यापी सर्वाधार सर्वशक्तिमान् सर्वेश्वर भगवान्‌का प्रेमपूर्वक अहैतुक भजन करते हो, तो चाहे संसारमें तुम्हें कोई न जाने, चाहे घरके लोग भी तुम्हारा मान न करें और चाहे विषयोंके तराजूपर तौलनेवाले विषयी पुरुष तुम्हें दरिद्र और अकिञ्चन समझकर, तुम्हारा अपमान ही करें—तुम्हारा इसमें कुछ भी नुकसान नहीं है, तुम सबसे ऊँचे धाम और सबसे बड़े नित्य और अमिश्रित आत्यन्तिक सुखको सदाके लिये प्राप्त हो जाओगे। इसके विपरीत, यदि तुम्हारे पास बहुत धन है, तुम बड़े परिवारवाले हो, राजा-महाराजा या हाकिम हो, बड़े गुरु वा उपदेशक हो, तमाम दुनियामें तुम्हारा नाम ज़गमगा रहा है, परन्तु हृदय अपवित्र है, राग-द्वेषके वशमें हुए विषयसेवनमें लगे हुए हो, भगवान्‌को स्मरण करनेके लिये समय ही नहीं मिलता, तो क्या हुआ, तुम्हारा यहाँका यह मान-सम्मान सर्वथा निरर्थक और परलोकमें दुःखका हेतु है। याद रक्खो तुम्हारी जिन्दगी बेकार ही नहीं है, तुम घोर नरकोंकी यात्राकी तैयारी कर रहे हो। अतएव मान छोड़कर दूसरोंको मान दो और सच्चे विनयी होकर भगवान्‌का भजन करो।

× × × ×

जीवन बहुत थोड़ा है, यदि तुम्हारा यह विश्वास हो गया है (और नहीं हुआ है तो महात्मा और संतोंकी वाणी और

उनकी जीवनीका अध्ययन करके करना चाहिये) कि भगवत्-प्राप्ति ही इस मनुष्य-जीवनका एकमात्र उद्देश्य है तो आजसे—अभीसे ही उसकी प्राप्तिके लिये प्रणबद्ध होकर दृढ़ताके साथ लग जाना चाहिये। संसारका कोई भी प्रलोभन तुम्हारे मार्गमें बाधा न दे सके, ऐसी शक्ति प्राप्त करनेके लिये सर्वशक्तिमान् परमात्मासे प्रार्थना करनी चाहिये। याद रक्खो—तुम उसी सर्वशक्तिमान्‌के सनातन अंश हो, तुममें वह शक्ति है, उसे भूले हुए हो, भगवत्-कृपासे प्रार्थनाके बलसे तुम उस शक्तिको जान जाओगे, और जानते ही तुम उस शक्तिवाले बन जाओगे। उस शक्तिकी जागृति-की पहली कसौटी है—विषयोंपर अनास्था और सर्वशक्तिमान् परमात्मापर अटल विश्वास। इस स्थितिको प्राप्त होनेपर तुम्हें कोई भी प्रलोभन नहीं रोक सकेगा। तुम विश्वविजयी होकर विश्वात्माको प्राप्त करोगे।

वैराग्य और अभ्यास

जबतक भोगोंमें वैराग्य नहीं होगा, तबतक यथार्थ निष्काम कर्म, भक्ति और ज्ञान इनमेंसे किसीकी प्राप्ति नहीं हो सकेगी! वैराग्यके आधारपर ही ये साधन टिकते हैं और बढ़ते हैं। इसीलिये अभ्यासके साथ वैराग्यकी आवश्यकता बतलायी गयी है। बिना वैराग्यका अभ्यास प्रायः आडम्बर उत्पन्न करता है।

× × × ×

जिनके मनमें वैराग्य नहीं है, जो भोगोंमें रचे-पचे हैं तथा भोग-वासनासे ही कर्म, भक्ति, ज्ञानका आचरण करते हैं, वे लोग पापाचरण करनेवाले तथा कुछ भी न करनेवालोंसे हजारों दर्जे अच्छे अवश्य हैं, परन्तु वास्तविक निष्काम कर्म, भक्ति, ज्ञानका साधन उनसे नहीं हो रहा है। और वे जो कुछ करते हैं, उसके छूटनेकी भी आशङ्का बनी ही है।

× × × ×

स्वार्थत्याग विना निष्कामता नहीं आती, दूसरे सब पदार्थोंसे प्रीति हटाये विना भगवान्से एकान्त प्रीति नहीं होती और जगत्के रागसे छूटे विना अभेदज्ञान नहीं होता। आज निष्काम कर्म, भक्ति और ज्ञानके अधिकांश साधक स्वार्थ, विषय-प्रेम और आसक्तिका त्याग करनेकी चेष्टा विना किये ही निष्काम कर्मी, भक्त और ज्ञानी बनना चाहते हैं। इसीसे वे सफल नहीं हो सकते।

× × × ×

साधारणतः वैराग्यके क्रमसे होनेवाले सात लक्षण हैं—(१) श्रीभगवान्को छोड़कर लोक-परलोकके सभी भोगोंमें फीकापन माछूम होना, (२) विषयोंमें महान् भय और सर्वथा दुःख दिखायी देना, (३) भगवान्को छोड़कर विषयोंका बिल्कुल ही न सुहाना, (४) विषयोंके त्यागकी प्रबल इच्छा होना और विषय-नाशमें सुखकी प्रतीति होना, (५) विषयोंका त्याग हो जाना, (६) विषयोंमें भगवद्भाव होना और (७) एक भगवान्की ही सत्ता भासना।

× × × ×

सबसे पहले विषयोंमें बार-बार दुःख देख-देखकर इनसे मन हटाने और भगवान्में परम और पूर्ण सुख समझकर उनमें मन लगानेका प्रयत्न करना चाहिये। यही वैराग्य और अभ्यास है। ज्यों-ज्यों विषयोंसे मन हटेगा, त्यों-ही-त्यों श्रीभगवान्में आप ही लगता जायगा। जब भगवान्के ध्यानका कुछ असली आनन्द मिल जायगा, तब तो मन उस आनन्दको छोड़ना ही नहीं चाहेगा!

फिर लोक-परलोकके सभी भोग फीके मालूम होने लगेंगे। क्रमशः वैराग्य बढ़ता जायगा और अन्तमें जगत्की भगवान्से अलग कोई सत्ता ही नहीं रह जायगी। यही असली वैराग्य है। वैराग्यवान् महानुभाव ही कल्याणको प्राप्त करते हैं।

× × × ×

वैराग्य और अभ्यास एक दूसरेके आश्रय और सहायक हैं। मनको विषयोंसे हटानेकी चेष्टा की, क्षणभरको मन हटा भी, परन्तु भगवान्में उसे न लगाया तो वह तुरन्त लौटकर विषयोंमें आ जायगा। इसी प्रकार विषयोंसे हटानेकी चेष्टा नहीं करनेसे विषयोंमें लगा हुआ मन उनसे हटकर भगवान्में अपने आप लगेगा ही क्यों? अतएव दोनोंका साथ-साथ रहना ही आवश्यक है। इन दोनोंमें भी वैराग्यकी पहले जरूरत है, क्योंकि उसके बिना तो एक विषयसे मन हटे बिना दूसरी ओर लग ही नहीं सकता।

नामरूपका मोह

दृढ़ निश्चय करो कि मैं शरीर नहीं हूँ, मैं नाम नहीं हूँ। ये नामरूप मुझमें आरोपित हैं। इनसे मेरा वस्तुतः कोई सम्बन्ध नहीं है। शरीरके नाशसे मेरा कुछ भी नहीं बिगड़ता, नामकी बदनामीसे मेरी बदनामी नहीं होती। मैं अमर हूँ, अजर हूँ, निष्कलंक हूँ, शुद्ध हूँ, सनातन हूँ, सदा एकरस हूँ, कभी घटने-बढ़नेवाला नहीं हूँ। शरीरके उपजनेसे मैं उपजता नहीं, शरीरके नष्ट होनेपर मैं नष्ट नहीं होता। मैं नित्य हूँ, असंग हूँ, अव्यय हूँ, अज हूँ। मेरे स्वरूपमें कभी कोई अन्तर नहीं पड़ता।

× × × ×

जो कुछ परिवर्तन होता है, सब नामरूपमें होता है। नाम-रूपसे आत्मा सर्वथा पृथक् है। माताके गर्भमें जब जीवात्मा आया,

उस समय उसका यह स्थूल शरीर (रूप) नहीं था, परन्तु जीवात्मा था, मरनेके बाद शरीर नष्ट हो जायगा, परन्तु जीवात्मा रहेगा, अतएव यह सिद्ध है कि शरीर जीवात्मा नहीं है। इसी प्रकार माताके गर्भमें जीवका कोई नाम नहीं था। लोग कहते थे बच्चा होनेवाला है। यह भी पता नहीं था कि गर्भमें लड़की है या लड़का। जन्म होनेपर कहा गया—लड़का हुआ! कुछ समय बाद एक नाम रक्खा गया। माता-पिताको वह नाम नहीं रुचा, उन्होंने दूसरा सुन्दर नाम रख लिया। बड़े होनेपर वह नाम भी बदल दिया गया। इससे यह सिद्ध हो गया नाम भी जीवात्मा नहीं है।

× × × ×

नाम-रूप दोनों ही कल्पित हैं—आरोपित हैं। परन्तु जीव इन्हींको अपना स्वरूप समझकर इनके लाभ-हानिमें अपनी लाभ-हानि समझता है और दिन-रात इन्हींकी सेवामें लगा रहता है। शरीरको आराम मिले, नामका नाम (कीर्ति) हो। बस, इसीके पीछे छोटे-बड़े सब पागल हैं। यह मोह है, अज्ञान है, उन्माद है, माया है! इससे अपनेको छुड़ाओ! अपने स्वरूपको सँभालो!! याद रक्खो, जबतक इस नाम-रूपको अपना स्वरूप समझे हुए हो तभीतक जगत्के सुख-दुःख तुम्हें सताते हैं। जिस दिन, जिस क्षण, नाम-रूपको मिथ्या प्रकृतिकी चीज मान लोगे और अपनेको उनसे परे समझ लोगे, उसी क्षण प्रकृतिजन्य सुख-दुःखसे छूट जाओगे। सारा कार्य प्रकृतिमें हो रहा है, आत्मा निर्लेप है। आत्मा तुम्हारा स्वरूप है!

× × × ×

याद रक्खो, शरीरके बीमार होनेपर तुम बीमार नहीं होते; शरीरके स्वस्थ होनेपर तुम स्वस्थ नहीं होते, शरीरके मोटे होनेपर तुम मोटे नहीं होते, शरीरके दुबले हो जानेपर तुम दुबले नहीं होते। तुम निःसंग हो, सदा सम हो, तुम्हारे अन्दर ये द्वन्द्व हैं ही नहीं। सारे द्वन्द्व प्रकृतिमें हैं। परन्तु हाँ, जबतक तुम प्रकृतिमें स्थित हो तबतक प्रकृतिके सारे विकार तुम्हें अपने अन्दर भासते हैं, तुम प्रकृतिके रोगोंसे भरे हो—महान् रोगी हो, शरीरके मोटे-ताजे और पूर्ण स्वस्थ होते हुए भी सर्वथा अस्वस्थ हो, तुम्हारी असली स्वस्थता—स्व (आत्मा) में स्थित होनेमें है। जो आत्मामें स्थित है, वही स्वस्थ है और जो प्रकृतिमें स्थित है, वही अस्वस्थ है।

× × × ×

इसी प्रकार तुम्हारे नामका खूब यश फैलनेमें तुम्हारा कोई यश नहीं होता, नामकी बदनामीमें तुम्हारी कोई बदनामी नहीं होती। नामके अपमानमें तुम्हारा अपमान नहीं; और नामके सम्मानमें तुम्हारा सम्मान नहीं। तुम नामसे अलग हो। परन्तु जबतक नामको अपना स्वरूप समझते रहोगे, तबतक नामकी बदनामीमें तुमको महान् दुःख होगा और नामके नाम होनेमें सुख होगा। यही कारण है कि तुम आज नामका नाम कमानेमें अमूल्य जीवन खो रहे हो! नामका नाम हो भी गया तो वह किस कामका? कितने दिन ठहरेगा और तुम्हें उससे वस्तुतः क्या लाभ हुआ?

नामके नामसे बन्धन और भी दृढ़ होगा, तुम आत्मामें स्थित होकर स्वस्थ होनेकी अवस्थासे और भी दूर हट जाओगे।

× × × ×

अतएव नाम-रूपका मोह छोड़कर—शरीरके आराम और नामके नामकी परवा छोड़कर अपने स्वरूपको सम्हालो। तुम सदा मुक्त हो, बन्धन तुम्हारे समीप भी नहीं आ सकता। सुख-दुःखके द्वन्द्व तुम्हारी कल्पनामें भी नहीं रह सकते। तुम आनन्द-रूप हो; तुम सत् हो और तुम चेतन हो। तुम स्वयं शान्तिके खजाने हो, तुम पूर्ण हो, तुम अखण्ड हो, तुम अनन्त हो, तुम कूटस्थ हो, तुम ध्रुव हो और तुम सनातन हो।



दिव्यत्व

मनकी नीरोगता ही सच्ची नीरोगता है। जिसका शरीर बलवान् और हृष्ट-पुष्ट है परन्तु जिसके मनमें बुरी वासना, असत् विचार, काम, क्रोध, लोभ, घृणा, द्वेष, वैर, हिंसा, अभिमान, कपट, ईर्ष्या, स्वार्थ आदि दुर्गुण और दुष्ट विचार निवास करते हैं, वह कदापि नीरोग नहीं है। उसकी शारीरिक नीरोगता भी बहुत ही जल्दी नष्ट होनेवाली है।

× × × ×

मनका सर्वथा वासनारहित होना ध्येय होनेपर भी बहुत ही कठिन है अतएव पहले बुरी वासनाओंको दबाकर अच्छी वासनाओं-

का संग्रह करना चाहिये । जिसके मनमें जितनी सद्‌वासनाएँ होंगी वह उतना ही अधिक सुखी होगा ।

× × × ×

मनका रोगी आदमी सदा जला ही करता है । वह कभी शान्ति और शीतलताकी उपलब्धि नहीं करता । कभी कामनासे जलता है तो कभी लोभसे, कभी अभिमानसे तो कभी वैरसे, कभी क्रोधसे तो कभी ईर्ष्यासे ।

× × × ×

सुन्दर भी वही है जिसका हृदय सुन्दर है । जो आकृतिसे वहुत सुन्दर है, जिसके शरीरका रंग और चेहरेकी वनावट वहुत ही आकर्षक है, परन्तु जिसके हृदयमें दुर्गुण और दोष भरे हैं, वह गन्दे हृदयका मनुष्य सदा ही असुन्दर है । ज्यों ही उसके हृदयके भाव वाहर आते हैं, त्यों ही वह सबकी घृणाका पात्र वन जाता है ।

× × × ×

हृदयको शुद्ध करो, एक-एक दोषको चुन-चुनकर निकाल दो, सद्‌गुणोंको ढूँढ़-ढूँढ़कर हृदयमें वसाओ, तुम्हारा हृदय देवपुरी बन जायगा । देवता वही है जिसके हृदयमें दैवी गुण भरे हैं, नहीं तो, वह देववेषमें असुर ही है ।

× × × ×

सारे जगत्‌में एकमात्र भगवान् पूर्ण हैं; जो ब्राह्मणमें हैं, वही चाण्डालमें हैं, जो हाथीमें हैं, वही गौमें हैं और वही कुत्तेमें हैं ।

इन सबके व्यवहारमें बड़ा भेद है और वह वाहरी भेद कभी मिट भी नहीं सकता। परन्तु इस महान् भेदके रहते भी वास्तवमें अभेद है। इस प्रकार भेदमें अभेद देखनेको ही भगवान्ने गीतामें ब्रह्मदर्शन बतलाया है। जो यों सर्वत्र सबमें ब्रह्मदर्शन करता है, वही दिव्य जीवनको प्राप्त है, वही भगवान्का परमप्रेमी भक्त है।

× × × ×

हम सबको भी भगवान्का भक्त बनना चाहिये। सबमें भगवान्का परिचय पाकर मन-ही-मन सबको नमस्कार करते हुए सबके साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार करना चाहिये। व्यवहारमें अनेकों भेद रहनेपर भी भगवान्का परिचय हो जानेपर, सब प्रकारके दोष दूर हो जायँगे! जहर निकल जायगा।

× × × ×

भक्त तो सबमें सर्वत्र सर्वदा अपने प्राणाराम भगवान्को देखता ही है। उसकी दृष्टिमें तो सब कुछ अपने प्राणाधार परमेश्वरका ही विलास होता रहता है! विलास ही क्यों, उसे सब कुछ भगवान् ही दीखता है। वह अपने हृदयेश्वरको नये-नये विभिन्न वेषोंमें देख-देखकर पल-पलमें प्रफुल्लित होता है, हँसता है और लीलामयकी लीलाका अभिनन्दन करता है!

× × × ×

भक्तके हृदयमें भगवान्का स्थान वैसे ही सर्वोपरि सुरक्षित रहता है जैसे पतिव्रता स्त्रीके हृदयमें पतिका। जैसे पतिव्रता स्त्री पतिरूपसे किसी अंशमें भी दूसरेको हृदयमें स्थान नहीं देती, इसी

प्रकार भक्त भी अपने एकमात्र प्राणाराम प्रियतम परमात्माको छोड़कर दूसरे किसीको हृदयमें स्थान नहीं देता । वास्तवमें उसके हृदयपर तो केवल परमात्माका ही अखण्ड एकछत्र राज्य छा जाता है । वहाँ दूसरेकी सत्ता कल्पनामें भी नहीं आ सकती ।

× × × ×

भगवान् सर्वशक्तिमान् हैं, सर्वगुणाधार हैं, सृष्टिकर्ता हैं, सबके एकमात्र स्वामी हैं, ऐश्वर्य, माधुर्य, कारुण्य, प्रेम आदिके अथाह समुद्र हैं, हमारे परम सुहृद् हैं । इस बातपर विश्वास होते ही उनके प्रति अपने-आप हृदय खिंच जाता है । शास्त्र और अनुभवी संतोंकी वाणीपर विश्वास करके हमें भगवान्‌को ऐसा समझ लेना चाहिये । जब भगवान्‌के सदृश कोई वस्तु हमारी दृष्टिमें न रहेगी, तब हमारा हृदय उन्हींका निवासस्थान बन जायगा । हमारा चित्त उन्हींके चिन्तनमें डूब जायगा ।

× × × ×

जिनके हृदयमें भगवान्‌का असाधारण प्रभाव प्रकट हो गया, जो भगवान्‌के प्रेमी हो गये, बस उन्हींका जीवन सफल है । इस सच्ची सफलताका लौकिक ऐश्वर्य, यश और सम्मान आदिसे कोई सम्बन्ध नहीं है । इन विषयोंमें सबसे अधिक सफलता प्राप्त कर चुकनेवाले मनुष्य भी वास्तवमें निरर्थक जीवन बिता देनेवाले अभागे ही हैं यदि उनका मन भगवत्-प्रेमसे शून्य है ।

× × × ×

जगत् चाहे हमें सफलजीवन और सद्भागी समझे परन्तु

यदि हमारे मनमें दोष भरे हैं, कामनाकी ज्वाला जल रही है, और भगवत्प्रेमसुधाका प्रवाह नहीं बह रहा है तो निश्चय समझो हमारा जीवन सर्वथा निष्फल ही है।

परन्तु जिनको कोई नहीं जानता अथवा जिनको निष्फल-जीवन समझकर लोग जिनसे घृणा करते हैं और नाक-भौं सिकोड़ते हैं, उनमें हमें ऐसे पुरुष मिल सकते हैं जो वास्तवमें सफलजीवन हैं। दिव्यत्वको प्राप्त हैं।

× × × ×

जगत्‌को कुछ भी दिखानेकी भावना न रखकर हृदयको शुद्ध बनाओ, बुरी वासना और दुर्गुणोंको हृदयसे निकालकर उसे दैवी गुणों और भगवत्-प्रेमसे भर दो। अपनेको अपने सर्वस्व और अपनेपनसहित भलीभाँति भगवान्‌के प्रति समर्पण कर दो। तुम्हारे अन्दर भागवतीशक्ति अवतीर्ण हो जायगी। श्रद्धापूर्वक चेष्टा करो, भगवान्‌की कृपासे कुछ भी कठिन नहीं है। विश्वास करो, तुम्हें अवश्य सफलता होगी, तुम इसी शरीरसे दिव्यत्वको प्राप्त हो जाओगे।

भगवान्‌की सेवा

जगत्‌में जो कुछ है, सब भगवान्‌की ही मूर्ति है, यह समझकर सबसे प्रेम करो, सबकी पूजा करो, अपना जीवन सबके लाभके लिये समर्पण कर दो। भूलकर भी ऐसा काम न करो, जिससे सबमेंसे किसी एकका भी अहित हो, एकके भी कल्याणमें बाधा पहुँचे।

× × × ×

दीन-हीन, सरल, असहाय बच्चे माँको ज्यादा प्यारे हुआ करते हैं, भगवान्‌रूपी जगज्जननीको भी उसके गरीब बच्चे अधिक प्रिय हैं, इसलिये यदि तुम माताका प्यार पाना चाहते हो तो माताके उन प्यारे बच्चोंसे प्रेम करो, उन्हें सुख पहुँचाओ, माता आप ही

प्रसन्न होकर अपना वरद-हस्त तुम्हारे मस्तकपर रख देंगी, तुम सहज ही कृतार्थ हो जाओगे ।

× × × ×

धरतीका धन ही धन नहीं है, सच्चा धन हृदयमें रहता है, उत्तम विचार और महान् चरित्र-बल ही परम धन है । यह धन-ऐश्वर्य और सौन्दर्यका यह खजाना, एक टूटी झोंपड़ीमें रहनेवाले अन्नवस्त्ररहित आडम्बरशून्य हड्डियोंके ढाँचेके अन्दर भी गड़ा मिल सकता है । राजमहलका राजवेश ही इसका निवासस्थान नहीं है; बल्कि उसमें तो यह धन भूले-भटके ही कहीं मिलता है ।

× × × ×

जिसके पास पैसे नहीं हैं परन्तु बुद्धि, विवेक, सत्य, श्रद्धा, चरित्र और प्रभुभक्ति है वह परम धनी है, और जो पैसेवाले हैं, या रात-दिन सिर्फ पैसा बटोरनेके काममें ही लगे रहते हैं, वे तो सदा ही निर्धन हैं ।

× × × ×

धनकी इच्छा ही मनुष्यको मतवाला बनाने लगती है और धन हो जानेपर तो वह प्रायः मतवाला हो ही जाता है, फिर उसे धनके नशेमें दूसरेके सुख-दुःखका कोई खयाल ही नहीं रहता, वह अपनी मौज-शौकके लिये गरीबोंका पेट काटते, उनकी झोंपड़ियाँ ढहाते और उनके खेतोंको पाटनेमें तनिक भी नहीं हिचकता ! धनके नशेमें कभी पागल मत होओ ।

× × × ×

याद रक्खो सव कुछ यहीं छोड़ जाना है इसलिये ऐसा धन मत कमाओ जिसमें गरीब तबाह होते हों, उनके मुँहका रूखा-सूखा टुकड़ा छिनता हो, उनके वाल-बच्चोंका जीवन विगड़ता हो, उनका भविष्य अन्धकारमय वन जाता हो। धन तो चला ही जायगा, गरीवोंका दारुण दुःख, उनका आर्त्तनाद, उनकी सन्तापज्वाला, प्रलयाग्नि वनकर, तुम्हारे सुखके नगरको भस्मीभूत कर डालेगी !

× × × ×

दुखियामें, अनाथमें, भूखेमें, रोगीमें, असहायमें, विधवामें, अपाहिजमें, मूक पशुओं और पक्षियोंमें, विपद्ग्रस्तोंमें, पापमें डूवे हुए लोगोंमें, पथ भूले हुए पथिकोंमें, शत्रुतासे वर्तनेवालोंमें और आडम्बरी लोगोंमें भगवान्‌को देखो और उनकी यथायोग्य पूजाकर—तन, मन, धनसे यथोचित उनका हित कर, भगवान्‌के प्रियपात्र वनो।

× × × ×

सुख न पहुँचा सको तो दुःख तो किसीको न पहुँचाओ, धरतीपरसे पापका भार हल्का न कर सको तो पापमय जीवन वनाकर उसके भारको वढ़ावो मत। जीवनको प्रभुमय, सादा, स्पष्ट, सरल, श्रद्धामय वनाओ और विवेकको सदा साथ रक्खो। यही भगवान्‌की सेवा है।

भगवत्प्रेम और उसकी प्राप्ति

जिनके मनमें भगवत्प्रेमकी इच्छा जाग उठी है, उन्हें दूसरी सारी इच्छाओंका सहज ही त्याग करना पड़ेगा। ऐसी वस्तुमात्रका ही संग छोड़ना पड़ेगा, जो भगवत्प्रेमके पथमें बाधक हों। फिर चाहे वे वस्तु लौकिक दृष्टिसे कितने ही गौरवकी और परम सुखदायिनी ही क्यों न समझी जायँ। जो प्रियतमके पथका कण्टक है, वह चाहे कितना ही आवश्यक या कीमती क्यों न हो, प्रेमीके लिये सर्वथा त्याज्य है।

× × × ×

ऊँचे-से-ऊँचा पदगौरव, बड़ी-से-बड़ी सम्पत्ति, दुनियाभरका सम्मान, अटल कीर्ति, अत्यन्त गौरवमयी विद्या, लौकिक विज्ञानका अद्भुत आविष्कार, साहित्यकी सरस मार्मिकता, नैसर्गिक कवित्व-शक्ति, मनचाहा सुखद परिवार और स्नेहमय हृदयसे पालन-पोषण करनेमें समर्थ माता-पिता आदि; कोई भी सहज आकर्षक या परम आवश्यक प्रिय वस्तु यदि भगवान्‌के प्रेमसे रहित है, यदि भगवत्-प्रेममें सहायक नहीं है, तो उसके त्यागमें ही भगवत्-प्रेमीको सुख मिलता है। जगत्‌का कोई पदार्थ रहे तो प्रभु-प्रेमको बढ़ानेवाला

होकर रहे—प्रभुके पूजनकी सामग्री होकर रहे, नहीं तो उसकी कोई भी आवश्यकता नहीं। जितना शीघ्र उसका संग छूटे, उतना ही मंगल है।

× × × ×

जो देश, स्थान, समाज, व्यक्ति, संयोग, वियोग, वेष, भाषा, साहित्य, विज्ञान, भोजन, वस्त्र भगवान्‌के प्रेमको जगानेवाला है, भगवत्प्रेमको बढ़ानेवाला है, भगवत्प्रेमसे पूर्ण है, बस, प्रेमी अपना सब कुछ खोकर, किसी भी बातकी तनिक भी परवा न करके उसीको चाहता है, उसीको ग्रहण करता है, उसीमें रमण करता है। वह प्रियतमकी प्रिय स्मृति दिलानेवाला होनेके कारण उसके मनको परम प्रिय है, फिर चाहे लौकिक दृष्टिसे वह पदार्थ कितना ही हीन और दुःखदायी क्यों न माना जाता हो।

× × × ×

जिसके हृदयमें प्रभुके प्रति अनुराग उत्पन्न हो गया, जो हृदय निर्मल प्रेमके कारण भगवान्‌के विरहतापसे तप्त हो उठा, उसमें दूसरी वस्तु रह नहीं सकती—समा नहीं सकती। वहाँ अन्यके लिये गुंजायश ही नहीं रह जाती। जिनका हृदय ऐसा अनन्य प्रभुप्रेममय हो गया है, उन्हींका जीवन सार्थक है, वे धन्य हैं।

× × × ×

ऐसे प्रभुप्रेमकी प्राप्तिमें प्रभुकी अहैतुकी दया और उनकी सुहृदता ही प्रधान उपाय है। यों तो प्रभुकी दया सभीपर है, प्रभु जीवमात्रके नित्य सुहृद् हैं, परन्तु उनकी दया और सुहृदताको

लाभ वही भाग्यवान् लोग उठाते हैं, जो प्रत्येक अनुकूल और प्रतिकूल स्थितिमें उनकी दया ढूँढ़ते हैं और दया देखनेका यत्न करते हैं। उनकी दयाका रहस्य समझमें आ जानेपर कोई प्रतिकूलता रह ही नहीं जाती। प्रत्येक स्थिति और प्रत्येक पदार्थ प्रभुसे व्याप्त दीखनेके कारण उसके लिये सभी कुछ अनुकूल हो जाता है। न वह प्रतिकूल स्थितिका अनुभव करता है और न कोई इन्द्रिय या मन आदि ही उसके प्रतिकूल होते हैं। जिनपर भगवान्की दया होती है, उनपर सबको दया करनी पड़ती है। सबको भगवत्प्रेरणासे स्वाभाविक ही उनके अनुकूल बन जाना पड़ता है। बाधक साधक हो जाते हैं और विघ्न पथप्रदर्शकका काम देते हैं।

× × × ×

भगवत्कृपा असीम है, इतनी है कि मनुष्य अपनी बुद्धिसे उसकी कल्पनातक नहीं कर सकता। परन्तु वह जितना-जितना अधिक देखता है, उतना-ही-उतना उसे शान्ति और आनन्दकी लहरोंका स्पर्श मिलता है। कुछ आगे बढ़नेपर तो वह आनन्दके असीम सागरमें एकरूप होकर निमग्न हो जाता है।

× × × ×

सत्संग, सद्बुद्धि, सद्ग्रन्थ, सदाचार आदि मनुष्यको भगवत्कृपासे ही प्राप्त होते हैं, बड़ी-बड़ी विपत्तियोंसे और पापोंके गड्ढेमें गिरनेसे मनुष्य भगवत्कृपासे ही बचता है। भगवत्कृपा इतनी है कि मनुष्य तो भूल करनेमें नहीं थकता और भगवत्कृपा उसकी रक्षा करनेमें नहीं चूकती।

× × × ×

कभी-कभी मनुष्यको ऐसा अवसर प्राप्त होता है, जब कि वह महान् दुःखोंसे घिर जाता है, चारों ओरसे आफतोंके पहाड़ टूटने लगते हैं, उस समय भी वास्तवमें भगवान्की दयाका ही कार्य हो रहा है। भगवान्का दण्डविधान भी दयासे पूर्ण होता है। उस दण्डसे ही मनुष्य विषयोंके दुःखमय स्वरूपको समझकर सुखमय सच्चिदानन्दकी ओर अग्रसर होता है।

× × × ×

भगवान् अपने प्रति शत्रुता करनेवालेके साथ भी स्नेहमयी जननीका-सा बर्ताव करते हैं। माताके दण्डविधानमें हृदयका स्नेह सन्निहित रहता है। जब लौकिक माता ही कभी अपने बच्चेके प्रति निर्दय नहीं हो सकती, तब संसारकी सारी भूत, भविष्यत्, वर्तमानकी माताओंका स्नेह जिन श्यामसुन्दरके स्नेह-सागरकी एक नन्हीं-सी बूँद है, वे भगवान् जीवोंके प्रति कैसे निर्दय हो सकते हैं?

× × × ×

भगवान्की दयाका अवलम्बन जीवके लिये परम अवलम्बन है। इससे बड़ा सहारा और कोई हो ही नहीं सकता। दयापर विश्वास करनेवाले मनुष्योंको तो इसके प्रमाणकी आवश्यकता ही नहीं होती। जिसने भगवान्की दयाका आश्रय लिया, वही स्नेह-मयी जननीकी सुखद गोदकी भाँति भगवान्की निरापद गोदमें सदाके लिये जा बैठा। परन्तु विश्वास बिना ऐसा नहीं हो सकता।

विश्वास हुए विना भगवान्की दयाका मनुष्य आश्रय नहीं लेता, भगवान्की दया विना मनुष्यके मनसे जगत्के विषयोंका आश्रय नहीं छूटता और जबतक विषयोंका आश्रय है तबतक किसी प्रकार भी सच्चे सुख और सच्ची शान्तिकी झाँकी नहीं हो सकती। विषयोंका आश्रय तो दूरकी बात है, विषयोंकी सूक्ष्म वासना भी वास्तविक शान्तिका उदय नहीं होने देती।

× × × ×

वासनानाशका सर्वोत्तम उपाय है—मनका भगवत्प्रेमकी कामनासे सर्वथा भर जाना और इसका प्रथम साधन भगवान्की दयापर विश्वास करना ही है।



सद्‌गुरु

मनुष्य-जीवनका ध्येय है परम कल्याण अर्थात् मोक्षकी प्राप्ति ! मुक्तिका मार्ग वही बतला सकते हैं जो मुक्त हो चुके हैं । भगवान्‌के परम धामका पथ उन्हींको ज्ञात है जो भगवत्कृपासे वहाँ पहुँच चुके हैं। इसीलिये मोक्ष या भगवत्-प्राप्तिके इच्छुक साधकजन तत्त्वज्ञानी, भगवत्प्राप्त महापुरुषोंकी खोज कर उनकी शरण लेते हैं और उनके बतलाये हुए मार्गपर चलकर भगवान्‌के धामतक पहुँचनेका यत्न करते हैं ।

× × × ×

ऐसे ही तत्त्वज्ञानी भगवत्प्राप्त महात्मागण 'सद्‌गुरु' कहलाते हैं । गुरु उसे कहते हैं, जिससे मनुष्य किसी ऐसी नयी बातको

सीखे, जिसको वह नहीं जानता। इस नाते मनुष्य सभीको गुरु मान सकता है। अवधूतने इसी दृष्टिसे चौबीस गुरु बनाये थे। परन्तु सद्गुरु इन सारे गुरुओंसे विलक्षण होता है। वह सत्—परमात्माके पथको जानता है, इसीसे मनुष्य उस सद्गुरुको परम गुरु मानकर सब कुछ उसके चरणोंपर न्योछावर कर देता है, क्योंकि वह उस सद्गुरुसे ऐसी चीज पाता है, जिसके सामने संसारकी सभी चीजें, सभी स्थितियाँ बहुत ही कम कीमतकी और अत्यन्त तुच्छ हैं।

× × × ×

सद्गुरु ही गोविन्दको मिलाता है, सद्गुरु ही शिष्यके दुःखोंको अशेष हरण करता है, इसीलिये शिष्यकी दृष्टिमें सद्गुरु ईश्वरसे बढ़कर सेव्य है। इसीसे शास्त्रों और संतोंने सद्गुरुकी अपार महिमा गायी है और गुरुशरणागतिके बिना भगवान्‌की प्राप्तिको अति दुर्लभ—असम्भव कहा है। बात भी बिल्कुल ठीक है; अनुभवी मार्गप्रदर्शक गुरु ही शिष्यको मायाके दुर्गम पथसे पारकर लक्ष्यस्थानपर ले जानेमें समर्थ है। ऐसे समर्थ गुरुकी जितनी पूजा हो, जितना सम्मान हो, जितनी भक्ति की जाय, उतनी ही थोड़ी है; क्योंकि ऐसे गुरुका बदला तो कभी चुकाया ही नहीं जा सकता। ऐसे गुरुका द्रोही नरकगामी न हो तो दूसरा कौन होगा? और ऐसे सद्गुरुकी शरण न लेनेवालेसे बढ़कर मूर्ख और मन्दभागी भी और कौन होगा?

× × × ×

तत्त्वज्ञानी गुरुके बिना परमात्माका तत्त्व कौन बतलावे? इसीलिये गुरुकी आवश्यकता है और गुरुसेवाका महत्त्व है। यही

गुरुभक्तिका रहस्य है। परन्तु ऐसे सद्गुरु सभी नहीं बन सकते। लोगोंके जीवनको लेकर खेलना साधारण बात नहीं है। यह बहुत ऊँचे अधिकारकी बात है। वस्तुतः परमात्माके रहस्यको सम्यक् प्रकार जाननेवाले महापुरुष ही सद्गुरुपदपर प्रतिष्ठित हो सकते हैं, इसीसे श्रुतिने 'श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ' गुरुके समीप जाकर उनसे ज्ञान सीखनेकी आज्ञा दी है। जो स्वयं अन्धा है वह दूसरे अन्धेको मार्ग कैसे दिखला सकता है? वह तो खुद गड्हेमें गिरेगा और जिन्होंने अपनी लाठी उसे पकड़ा रक्खी है, उनको भी गिरावेगा। आज भारतवर्षमें यही हो रहा है। भोगविलासमें लगे हुए लोग, इन्द्रिय-विषयोंमें आसक्त मनुष्य परमार्थपथके प्रदर्शक गुरु बन गये हैं, इसका परिणाम घोर नरकाग्निमें आहुति पड़ने और उसके अधिकाधिक प्रज्वलित होनेके अतिरिक्त और क्या हो सकता है?

× × × ×

निष्काम कर्म, भक्ति और ज्ञान—ये तीन ही भगवत्प्राप्तिके प्रधान मार्ग हैं। योग तीनोंमें साथ है, इसीसे ये कर्मयोग, भक्तियोग और ज्ञानयोग कहलाते हैं। भक्तिको भगवत्-कर्ममें सम्मिलित करनेपर कर्मयोग और ज्ञानयोग ये दो ही निष्ठाएँ रह जाती हैं। इन मार्गोंसे चलकर परमात्माका साक्षात्कार किये हुए पुरुष यथार्थ कर्मयोगी, भक्त और ज्ञानी हैं, इसी प्रकारके तरे हुए महापुरुष संसार-सागरमें गोता खाते हुए जीवोंको तारनेमें समर्थ होते हैं। जबतक विषयोंमें राग रहता है, तबतक मनुष्य वस्तुतः न तो निष्काम कर्मका आचरण कर सकता है, न भक्त हो सकता

है और न ज्ञानमार्गपर ही चल सकता है। राग या आसक्तिसे ही कामना उत्पन्न होती है, कामनावाला मनुष्य निष्काम नहीं हो सकता। विषयोंका प्रेमी या विषयासक्त मनुष्य ईश्वरमें अनन्य प्रेम कभी नहीं कर सकता। इसी प्रकार विषयासक्त पुरुष अद्वैत परमात्मतत्त्वका साक्षात्कार नहीं कर सकता। तीनों ही मार्गोंके लिये सबसे पहले विषय-वैराग्यकी अत्यन्त आवश्यकता है। वैराग्यकी भित्तिपर ही निष्काम कर्म, भक्ति और ज्ञानकी सुन्दर सुदृढ़ इमारत खड़ी हो सकती है। दिखलानेके लिये किये जानेवाले विषयवैराग्यहीन कर्मयोग, भक्ति और ज्ञानसे तो प्रायः पतन ही होता है। (वैराग्य ही परमार्थ-साधनका प्राण है।)

× × × ×

स्वरूपसे विषयोंको छोड़कर कठिन संयम और नियमोंका पालन करते हुए भी मनुष्य जब विषयोंके वशमें हो जाता है, बड़े-बड़े साधु-महात्माओंको भी जब कामिनी-काञ्चनसे और मान-बड़ाईसे सर्वथा पिण्ड छुड़ानेमें बड़ी-बड़ी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ता है, तब उन लोगोंके पतन होनेमें क्या आश्चर्य है जो रात-दिन भोगोंमें रचे-पचे रहते हैं, धन कमाते हैं, सञ्चय करते हैं, भेंट लेते हैं, परिवारके झमेलोंमें बुरी तरह उलझे रहते हैं, राजाओंका-सा ठाट-बाट रखते हैं, माल-मलीदा खाते हैं, इत्र-फुलेल लगाते हैं, गहनों-कपड़ोंसे दिन-रात शरीर सजानेमें लगे रहते हैं, नाटक-सिनेमा देखते हैं, वेश्याओंके नाच-मुजरे सुनते हैं, श्रृंगारके ग्रन्थ और गन्दे उपन्यास पढ़ते हैं,

राजसी ठाटसे काश्मीर और नैनीतालकी सैर करते हैं, स्वयं भगवान् बनकर सेवक-सेविकाओंसे पैर पुजवाते हैं, खुशामदियोंसे घिरे रहते हैं और अभिमानके नशेमें चूर रहते हैं।

× × × ×

परमात्माको प्राप्त करनेकी आशासे ऐसे मोहजालसमावृत, विलासविभ्रमरत, अनेकचित्तविभ्रान्त, स्वेच्छाचारी, कामभोगपरायण लोगोंको गुरु मानना या गुरु बनाना और श्रीगोविन्दको छोड़कर गोविन्दकी प्राप्तिके लिये इनकी पूजा करना वस्तुतः मोह ही है। ऐसे लोगोंसे परमार्थकी आशा ही क्योंकर की जा सकती है? जो भगवान्‌के नामपर भोगोंकी सेवामें लगे हुए हैं, जिनके हृदयमें नन्दनन्दनकी जगह धन और पार्थिव रूप बसा हुआ है, वे मायामोहित प्राणी लोगोंको मायासे मुक्त कैसे कर सकते हैं? ईश्वरके नाते तो प्राणीमात्रको ही प्रणाम करना धर्म है परन्तु सद्गुरु समझकर परमात्माको प्राप्त करनेकी आशासे ऐसे लोगोंके पैर पूजने और इनसे कानोंमें मन्त्र फुँकवानेमें सिवा हानिके तनिक भी लाभ नहीं है।

× × × ×

कानमें मन्त्र फूँकनेसे ही उद्धार नहीं हो जाता। उद्धार होता है दो उपायोंसे—सद्गुरु-प्रदत्त मन्त्रके सम्यक् विधिवत् अनुष्ठानसे अथवा भगवत्कृपाप्राप्त शक्तिसम्पन्न सद्गुरुकी तपः-शक्तिसे। सम्भवतः इन्हीं दोनों कारणोंसे ईश्वरस्वरूप, तत्त्वज्ञानी महात्मा पुरुषोंसे मन्त्र ग्रहण करनेकी प्रथा चली होगी जो इस दृष्टिसे वस्तुतः बहुत ही लाभकारी थी; परन्तु आज ऐसे सद्गुरुओंका

प्रायः अभाव है। आज गली-गलीमें डोलनेवाले लाखों गुरुओंमें बहुत ही थोड़े ऐसे सच्चे सद्‌गुरु होंगे। ऐसी स्थितिमें कान फुँकवाने और केवल जिस किसीको गुरु माननेसे ही उद्धार हो जायगा, ऐसी धारणा रखनेवाले मनुष्य बहुत अंशमें ठगे ही जाते हैं! क्योंकि न तो मन्त्रदान करनेवाले लोग स्वयं मन्त्रमें या मन्त्रके देवतामें श्रद्धा रखते हैं; (रखते होते तो वे उसीके परायण होकर रहते) न शिष्यगण साधन करनेका श्रम उठाना चाहते हैं और न मन्त्रदाताओंमें ही वह शक्ति है कि जिसके प्रभावसे मन्त्र देते ही अपने आप शिष्यका उद्धार हो जाय।

× × × ×

एक बातसे तो बहुत ही सावधान रहना चाहिये। हिन्दू-स्त्रियोंके लिये पुरुष-जातिमें दो ही ऐसे गुरु हो सकते हैं जिनके चरण-स्पर्श करनेका उसे अधिकार है; एक विवाहित पति और दूसरे समस्त विश्वके पति ईश्वरोंके भी ईश्वर परमेश्वर। इन दोको छोड़कर, वे सन्मार्गकी शिक्षा तो किसी भी योग्यतम चरित्रवान् वैराग्यसम्पन्न पुरुषसे ले सकती हैं परन्तु किसीके चरण-स्पर्श करने या किसीसे कानमें मन्त्र फुँकवानेकी उन्हें आवश्यकता नहीं है, चाहे कोई वास्तविक महात्मा या महापुरुष ही क्यों न हो। चरण-स्पर्श करने या मन्त्रग्रहण करनेसे बढ़कर लाभ सच्चे महापुरुषकी शास्त्रसम्मत निर्दोष आज्ञापालनसे ही हो जायगा। इसमें किञ्चित् भी सन्देह नहीं। सच्चे महापुरुषकी आज्ञा निर्दोष ही होगी और सच्चा महापुरुष भी उसीको समझना चाहिये जिसकी आज्ञा विषयोंमें

फँसानेवाली और पापमयी न हो। मन्त्रदानका अर्थ मार्ग बतलाना ही है, कान फूँकना नहीं।

× × × ×

गुरु या मार्गदर्शककी जरूरत तो सबको रहती ही है, इससे अपने मनमें किसीको गुरु माननेमें आपत्ति नहीं परन्तु आजके बिगड़े जमानेमें किसीके साथ प्रत्यक्ष सम्बन्ध जोड़नेके पहले, आत्मसमर्पण करनेके पूर्व कुछ समयतक, परीक्षाके भावसे नहीं, किन्तु साधनाके भावसे उसके बताये हुए साधनको और उसके संगको करके देखे। यदि दैवी सम्पत्तिमें वृद्धि हो या कम-से-कम आसुरी सम्पत्तिके भाव न बढ़ें तो ठीक है, यदि उसके संगसे आसुरी सम्पत्ति बढ़े, काम या लोभकी जागृति हो तो सावधान हो जाय। जो गुरु प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी भी रीतिसे अपने आरामके लिये धन या स्त्रीकी माँग करे, उससे तो जरूर ही सावधान हो जाय।

× × × ×

भारतवर्षमें आज भी सच्चे साधुओंका और ईश्वरप्राप्त महापुरुषोंका अभाव नहीं है। तीव्र उत्कण्ठाके साथ सर्वान्तर्यामी सर्वव्यापी भगवान्‌से ऐसे सद्‌गुरुकी प्राप्तिके लिये प्रार्थना करनी चाहिये। यदि आपकी अभिलाषा सच्ची और तीव्र होगी तो सच्चे संत अवश्य ही मिलेंगे। अधिक क्या, स्वयं भगवान्‌को संत बनकर आपको उपदेश प्रदान करनेके लिये आना पड़ेगा!

× × × ×

ईश्वरका सतत स्मरण, अपने अन्दर सद्‌गुणोंकी वृद्धि और भोगोंसे वैराग्य; इन तीन बातोंको बढ़ाते रहिये। ईश्वरके राज्यमें

अन्याय नहीं होता । यदि आपकी सच्ची साधना होगी तो आपकी स्थितिके अनुसार आपको सद्गुरु अवश्य मिल जायँगे ।

× × × ×

गुरुमें भक्ति और श्रद्धा अवश्य करनी चाहिये । जो गुरुका भक्त नहीं होगा, वह भगवान्‌का भक्त कैसे होगा । परन्तु इस गुरु-भक्तिका आरम्भ गुरुजनोंकी—माता-पिताकी भक्तिसे करना चाहिये । जो माता-पिताको नहीं मानता वह गुरु और भगवान्‌को सहजमें नहीं मानेगा । प्रह्लादका उदाहरण देकर माता-पिताकी आज्ञा न माननेका समर्थन करना सहज है परन्तु प्रह्लाद बनना बड़ा ही कठिन है । प्रह्लाद या भरतके लिये पिता-माताकी आज्ञाका उल्लंघन करना धर्म था, परन्तु विषयानुरागी, स्वार्थी, जिद्दी, लोभी और क्रोधी मनुष्यका वैसा करने जाना पतनके स्रोतमें ही बहना है ।

× × × ×

जो मनुष्य सदाचारी है, दैवी सम्पदाको बढ़ानेमें सदा तत्पर है, माता-पिता-गुरुजनोंका आज्ञाकारी है, सदा सत्य बोलता है, क्रोध नहीं करता, ब्रह्मचर्यका पालन करता है, संयमी है, तपस्वी है, स्वधर्मपरायण है, दुखी-दीन प्राणियोंकी सेवामें तन, मन, धनसे लगा रहता है, दया और प्रेमसे जिसका हृदय छलकता है, जो दूसरोंकी भलाईके लिये स्वार्थका त्याग प्रसन्नतासे करता है, परार्थमें ही स्वार्थ समझता है, परायी स्त्रीको माता समझता है, भोग-

विषयोंमें अनासक्त है और आठों पहर यथासाध्य भगवान्‌का स्मरण करता है तथा प्राणीमात्रमें परमात्माको देखकर सबका सम्मान करता है, वही पुरुष यथार्थ आत्मोन्नति कर रहा है। ऐसे पुरुषका संग सदा ही मङ्गलकारक है, चाहे वह मुक्त न हो। ऐसे पुरुषको गुरु माननेमें या उससे सत्-शिक्षा और सत्परामर्श लेनेमें सदा ही लाभ है। वह मुक्त होगा तो मुक्तिधामतक पहुँचा देगा। अन्यथा, जहाँतक पहुँचा है वहाँतक तो आगे बढ़ाकर ले ही जायगा।



शिक्षा और अधिकार

आजकल शिक्षा-प्रचारकी ओर लोगोंका ध्यान लगा है, लगना भी चाहिये। शिक्षासे ही जीवन यथार्थ मनुष्य-जीवन वनता है परन्तु जितना ध्यान परीक्षामें उत्तीर्ण होने तथा करानेका रहता है, उतना यथार्थ योग्यता वढ़ानेका नहीं। यही कारण है कि आजकल वहुत-से उपाधिधारी सज्जन उक्त विषयकी, यथार्थ जानकारीसे शून्य ही पाये जाते हैं। परीक्षाके समय पाठ रटकर उत्तीर्ण होनेसे वास्तविक योग्यता नहीं वढ़ती, यह प्रत्यक्ष देखा जाता है।

× × × ×

परन्तु यथार्थ सच्चा जीवन तो कोरी योग्यतासे भी नहीं बनता। आजकल कलाओंपर बड़ा जोर है; लेखनकला, वक्तृत्व-कला और काव्यकला आदिमें निपुण होनेकी बड़ी चेष्टा होती है। मेहनत करनेवाले पुरुष सफल भी होते हैं। किसी भी विषय-पर लेख लिखकर, वक्तृता सुनाकर या काव्य-रचना कर वे लोगोंको कुछ कालके लिये मुग्ध और प्रभावित कर सकते हैं। परन्तु वास्तविक अनुभव बिना, केवल कला उनके जीवनका केवल बाह्य प्रदर्शनमात्र होती है, निर्जीव शरीरकी भाँति उससे कोई प्रकृत लाभ नहीं होता।

× × × ×

वेदान्तके परीक्षोत्तीर्ण विद्वान् वेदान्तपर लिखने और बोलनेमें प्रत्येक प्रक्रियाका सूक्ष्मसे भी सूक्ष्मतम विवेचन कर देंगे। परन्तु क्रियारूपमें उनके पास कुछ भी नहीं मिलेगा, वे स्वयं शोक-सागरमें डूबे हुए मिलेंगे। उनका वेदान्त केवल अध्ययन, शास्त्रार्थ या लोकप्रदर्शनकी वस्तु होगा। यही हाल भक्तिकी उपाधि धारण करनेवाले वक्तृत्व और लेखनकलामें कुशल भक्त नामधारियोंका मिलेगा। कार्यक्षेत्रमें भक्ति विषयोंमें ही मिलेगी परन्तु वक्तृता या लेखमें भक्तिका स्रोत बह जायगा। यह बाह्य-जीवन है।

× × × ×

तुलसी, सूर, दादू, कबीर, मीरा आदिकी रचनाओंमें, और केवल कविताके भाव और सौन्दर्यकी दृष्टिसे काव्य-रचना करने-वालोंके महाकाव्योंमें यही बड़ा भारी अन्तर है। सम्भव है, इनकी

कविता कलाकी दृष्टिसे तुलसी, सूरके टक्करकी हो, या दादू, कबीर, मीरा आदि संतोंकी कविताओंसे बहुत बढ़ी-चढ़ी हो, परन्तु दादू, कबीर, मीराका-सा हृदय और अनुभव इनमें कहाँसे मिलेगा ?

× × × ×

ज्ञान, भक्ति, योग, वैराग्य, धर्म और विज्ञान आदि विषयोंमें इसीलिये गुरु और शिष्य दोनोंके अधिकारकी प्रधानता है। ये बाजारू चीजें नहीं हैं। इसीलिये ये सब विषय गुरुमुखसे पढ़नेके माने जाते हैं। लेख या व्याख्यानबाजीके नहीं। जबसे अनुभवरहित लोगोंने केवल किताबी ज्ञानके आधारपर इधर-उधरसे मसाला एकत्र करके लिखना और उपदेश देना शुरू किया, जब-से ये बाजारकी वस्तुएँ हो गयीं, तभीसे इनका महत्त्व कम हो गया। क्योंकि अनुभवशून्य लेखों और व्याख्यानोंके अनुसार आचरण करनेवालोंको कोई विशेष लाभ नहीं हुआ, इससे उनकी श्रद्धा घट गयी।

× × × ×

वर्षों तपस्या और साधना करके गुरु-कृपा और भगवत्कृपासे जिन्होंने तत्त्वकी उपलब्धि की है वे ही उस तत्त्वका उपदेश देनेके अधिकारी हैं, और जो तप और साधनाके द्वारा उस तत्त्वको पानेका सच्चा अभिलाषी है, वही गुरु और हरिका भक्त मनुष्य सुननेका अधिकारी है। आज प्रायः इन दोनोंका अभाव है, इसीसे असली लाभ नहीं होता।

× × × ×

सभी बातोंमें दिखौआपन आ जानेसे लोग केवल ऊपरकी बातें देखते हैं, क्योंकि वे भी भीतर प्रवेश करना नहीं चाहते। कौन कैसा बोल सकता है, कैसा लिख सकता है, किसकी रचना कैसी होती है, इसी ओर लोगोंका ध्यान है, सच्चे अनुभवी हृदयकी खोज नहीं है। परन्तु यह नियम है कि सच्चे अनुभवी बिना यथार्थ तत्त्वका पता नहीं लग सकता। जो जिस विषयका तत्त्वज्ञ होता है, वह चाहे दूसरे विषयमें बिल्कुल अनभिज्ञ हो, चाहे वह कलाकी दृष्टिसे दूषित भाषामें ही बोलता हो, परन्तु उस तत्त्वका पता उसीसे लग सकता है। चित्रकार या स्वर्णकार अथवा अन्य कोई कलाकार चाहे शुद्ध संस्कृत या अंगरेजीमें अपने विषयका प्रतिपादन न कर सकते हों, चाहे उन विषयोंपर सुन्दर कविता न लिख सकते हों परन्तु उनकी विद्या सीखनेके लिये बड़े-बड़े विद्वानोंको भी उन अनुभवियोंके पास ही जाना पड़ेगा। बड़े-से-बड़े महाराजा और महान् कवि भी रोगकी चिकित्साके लिये अनुभवी वैद्यकी ही शरण लेंगे। वस्तुतः अनुभव ही बड़ा है; विद्या या कला उसके साथ हो तो सोना और सुगन्ध दोनों है। तुलसी, सूर आदिमें दोनों बातें थीं।

× × × ×

परन्तु जिसको अनुभव हो और विद्या न हो तो चाहे वह दूसरोंको उतना लाभ न पहुँचा सके, चाहे वह दूसरोंको आकर्षित न कर सके, पर उसको तो उस तत्त्वकी उपलब्धि हो ही गयी।

अनुभवहीन विद्या या कला, प्राणहीन शरीरके समान निरर्थक होती है । इसीलिये भगवान् श्रीमद्भागवतमें कहते हैं—

शब्दब्रह्मणि निष्णातो न निष्णायात्परे यदि ।
श्रमस्तस्य श्रमफलो ह्यधेनुमिव रक्षतः ॥
(११ । ११ । १८)

जो पुरुष वेदको पूरा पढ़ गया—वेदमें पारंगत हो गया, परन्तु जिसने परब्रह्मको नहीं जाना, उसे बाँझ गौको पालनेवालेके समान केवल परिश्रम ही हाथ लगता है । यही हाल अनुभवहीन विद्याका है । विद्या न होकर भी जिसके पास अनुभव हो—वस्तु हो, उसीकी सेवा करके, आदर करके उससे उक्त वस्तुके प्राप्त करनेकी चेष्टा करनी चाहिये । कलाहीन समझकर उसकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिये ।

× × × ×

मनुष्यको अनुभवकी प्राप्तिके लिये—तत्त्वकी उपलब्धिके लिये ही प्रयत्न करना चाहिये और वास्तविक तत्त्वकी उपलब्धिके बाद ही उस तत्त्वके सम्बन्धमें कुछ बोलना या लिखना चाहिये । तभी उस बोलनेवालेका यथार्थ प्रभाव पड़ता है और उससे काम होता है । यदि ऐसा नहीं होगा और केवल कलाके नामपर अनुभवरहित लेखों, उपदेशों, वक्तृताओं और कविताओंकी शब्दाडम्बरभरी बाढ़ यों ही बहती रहेगी तो इसीके साथ अनुभवी पुरुषोंके वचनोंकी भी कोई कीमत नहीं रह जायगी और इसलिये

उनका प्राप्त होना, पहचानना तथा समझना भी कठिन हो जायगा।

× × × ×

हर एक विषयपर हर एकके बोलनेका अधिकार इसीलिये नहीं माना जाता था। परन्तु आजकी दशा विपरीत है। आज तो महान् मिथ्यावादी सत्यपर, विषयी वेदान्तपर, कायर शूरतापर, व्यभिचारी ब्रह्मचर्यपर, असती पातिव्रतपर, स्वेच्छाचारी मर्यादापर, भोगी वैराग्यपर, असाधु साधुतापर और नास्तिक भक्तिपर लिखते तथा बोलते हैं। सभी क्षेत्रोंमें यही गड़बड़झाला हो रहा है। इसीलिये आज 'सब धान बाईस पसेरी' हो रहा है और अच्छे-बुरे-की पहचान प्रायः नष्ट हो चली है।



सच्ची शिक्षा

जो अपनी सारी इन्द्रियोंको और मन-बुद्धिको भगवान्के काममें लगाये रखता है, वही बुद्धिमान् भक्त है । कानसे भगवान्के गुण सुनो, आँखोंसे संतोंको देखो, जीभसे भगवान्के गुण गाओ, हाथसे भगवान्की सेवा करो, पैरोंसे भगवान्के स्थानोंमें जाओ, मनसे भगवान्का चिन्तन करो और बुद्धिसे भगवान्का विचार करो । तुम्हारा जीवन पवित्र—भगवत्-मय बन जायगा ।

× × × ×

संगसे ही आदमी अच्छा-बुरा बनता है, संग केवल मनुष्यका नहीं, इन्द्रियोंके विषयमात्रका ही अच्छा-बुरा संग होता है । अच्छे

संगका सेवन करो, बुरा संग सदा छोड़ो । कानसे बुरी बात मत सुनो, आँखोंसे बुरी चीज़ें मत देखो, जीभसे बुरी बात मत कहो, हाथसे बुरा काम मत करो, पैरसे बुरी जगह मत जाओ, मनसे बुरा चिन्तन मत करो और बुद्धिसे बुरे विचार मत करो । तुम सब बुराइयोंसे आप ही छूट जाओगे ।

× × × ×

ऐसी पुस्तक कभी मत पढ़ो जिससे विषयोंका लालच बढ़े और पापमें मन जाय, चाहे उसका नाम शास्त्र ही क्यों न हो । विषयोंसे मनको हटानेवाली और पापसे बचानेकी शिक्षा देनेवाली पुस्तकें पढ़ो; ऐसी ही बातें सुनो और ऐसे ही स्थानमें रहो ।

× × × ×

विषयचिन्तन सर्वनाशकी जड़ है और भगवच्चिन्तन दुःखोंसे छूटनेका मूलमन्त्र है । बड़ी सावधानीसे मनसे विषयोंके चिन्तनको हटाते रहो और निरन्तर भगवान्‌का चिन्तन करो । ज्यों-ज्यों विषय-चिन्तन कम होकर भगवच्चिन्तन बढ़ेगा, त्यों-ही-त्यों तुम शान्ति और सुखके समीप पहुँचोगे । विषयचिन्तन सदाचारीको भी पापके पंकमें डाल देता है और भगवच्चिन्तन अत्यन्त दुराचारीको भी शीघ्र ही साधु भक्त बना देता है ।

× × × ×

दो केन्द्र हैं—एक दुःखका दूसरा सुखका, दुःखके केन्द्रमें बैठकर चाहे जितनी सुखकी बातें करो, कभी सुखी नहीं हो सकते, और सुखके केन्द्रमें पहुँचनेपर दुःख ढूँढ़े भी नहीं मिलता ।

विषयका आश्रय दुःखका केन्द्र है और भगवान्‌का आश्रय सुखका। चाहे कोई कितनी ही ऊँची-ऊँची बातें करे, जबतक विषयके आश्रयसे सुख पानेकी आशा है तबतक वह वैसे ही सुखी नहीं हो सकता जैसे आगकी लपटोंमें पड़ा हुआ आदमी केवल बातोंसे शीतलता नहीं पाता। अतएव जगत्‌का आश्रय छोड़कर भगवान्‌का आश्रय ग्रहण करो; उस सुखके केन्द्रमें स्थित होकर फिर चाहे दुःखालय संसारकी बात भी करो, तुम्हें दुःख उसी प्रकार नहीं छू सकेगा जिस प्रकार हिमालयकी बरफमें बैठे हुए पुरुषको गरमी नहीं छू सकती।

× × × ×

सबमें परमात्माका निवास समझकर सबका सम्मान करो, अपमान तो किसीका भी मत करो। स्वयं मान छोड़कर सबका सम्मान करोगे, दूसरोंके मानपर तुम्हारा कोई भी आचरण किसी प्रकार ठेस पहुँचानेवाला नहीं होगा तो तुम आप ही सबके प्यारे बन जाओगे। फिर तुम्हें सभी हृदयसे चाहेंगे और तुम अपनी इच्छानुसार अधिकांशको सन्मार्गपर ला सकोगे।

× × × ×

दूसरेके साथ ऐसा कोई बुरा बर्ताव कभी न करो, जैसा अपने साथ दूसरोंसे तुम नहीं चाहते। यदि तुम दूसरोंसे सम्मान, सत्कार, उपकार, दया, सेवा, सहायता, मैत्री और प्रेम आदिकी आशा रखते हो तो पहले दूसरोंके प्रति तुम यही सब बर्ताव करो।

× × × ×

अपनी अच्छी बात दूसरेसे प्रेमपूर्वक कहो परन्तु यह आग्रह

न करो कि वह तुम्हारी बात मान ही ले। और न माननेवालेको कभी न तो बुरा कहो और न मनमें ही बुरा समझो। उसे अपनी बात मनवानेकी नहीं, परन्तु निवेदन करनेकी चेष्टा करो। कभी अपनी भूल हो तो मान-भंगके भयसे अपनी बातपर अड़ मत रहो। भूल स्वीकार करनेमें हानि तो होती ही नहीं, ठीक रास्तेपर आनेसे बड़ा भारी लाभ अवश्य होता है।

× × × ×

दूसरोंसे अपनी बातके समर्थनकी नीयतसे ही उनकी सम्मति मत चाहो। भूल-चूक बतानेके लिये ही उनकी राय पूछो और यदि कोई भूल बतावे तो बुरा न मानकर उसपर विचार करो तथा उसका उपकार मानो। यदि वह कोई ऐसी भूल बतावे जो अपनेमें न दीखे, तब भी उसकी नीयतपर सन्देह न करो; फिर गौर करके अपने हृदय और आचरणोंको टटोलो, कहीं-न-कहीं भूल लुकी-छिपी मिल जायगी। कदाचित् न भी मिले और भूल बतलाने-वाला ही भूला हो, तो भी उसकी कृपा मानो, जिसने तुम्हें सुधारनेके लिये तुम्हारी भूल बतलाने-जैसा छोटा काम स्वीकार किया और इस काममें अपना मन और समय लगाया।

× × × ×

तुम्हारी रायपर कोई न चले तो बुरा मत मानो, न उससे घृणा करो। बल्कि तुम्हारी रायके अनुसार काम न करनेके कारण उसको कोई नुकसान पहुँचा हो, और वह फिर कभी मिले तो उससे यह मत कहो कि मेरी राय न माननेका फल तुम्हें मिला

है। उसके साथ प्रेमसे मिलो, उसे समयपर फिर अपनी नेक सलाह दो और अच्छे मार्गपर चलानेकी चेष्टा करो।

× × × ×

किसीमें कोई दोष देखकर उसके लिये मनमें यह निश्चय न कर बैठो कि वह बुरा ही आदमी है। हो सकता है, दोष देखनेमें तुमने भूल की हो अथवा किसी परिस्थितिमें पड़कर मन न रहनेपर भी उससे वह दोष बन गया हो। अच्छे-बुरे गुण सभीमें हैं; उसके अच्छे गुणोंको देखकर उसपर प्रेम करो।

× × × ×

सच्चा दोष दीखनेपर भी किसीका अपमान न करो या उसपर क्रोध करके दोष निकालनेकी चेष्टा न करो। कभी-कभी तुम्हारे अपमान या क्रोधसे दोषी मनुष्यकी दूषित वृत्ति दब जायगी, परन्तु उस वृत्तिका नाश नहीं होगा। तुम्हारा किया हुआ अपमान या क्रोध उसके मनमें चुभता रहेगा और यदि वह भूलमें पड़ गया तो अपने दोषके लिये पश्चात्ताप न कर तुमसे अपमान या क्रोधका बदला लेनेकी धुनमें लगा रहेगा। इससे उसमें भी नये दोष पैदा होंगे और उसकी द्वेषयुक्त चेष्टासे भड़ककर तुम भी अधिक क्रोधी और हिंसक बन जाओगे। किसीका दोष जड़से निकालना हो तो उसके प्रिय बनकर उसकी सेवा कर-कर उसके मनपर अधिकार जमाओ और फिर उसे समझाओ। सम्भव है, इसमें सफलता कुछ देरसे मिले; परन्तु मिलेगी अवश्य और स्थायी मिलेगी। याद रक्खो— राज, समाज और व्यक्तियोंने दण्ड दे-देकर अपराधियोंकी संख्या

बढ़ा दी है। जो खुद दोष करते हैं और रागद्वेषवश यथार्थ दोषका निर्णय नहीं कर सकते, उन्हें दूसरोंके दोष देखने और उन्हें दण्ड देनेका कोई अधिकार नहीं है।

× × × ×

एक बातका सदा खयाल रक्खो। अपने पुत्र, भाई, सेवक या किसी और अपनेसे नीचे पद या स्थितिवालेका भी दूसरोंके सामने कभी अपमान मत करो। कोई भी आदमी अपना अपमान सहना नहीं चाहता। अपमानित मनुष्य चाहे बोल न सके, परन्तु उसके दिलमें बड़ा दुःख होता है और उसके मनमें अपना अपमान करनेवालेके प्रति बुरी भावना जरूर पैदा होती है। इसलिये किसीको सावधान करनेके लिये कुछ कहना हीं हो तो, एकान्तमें कहो। और वह भी जहाँतक बने सहानुभूति और प्रेमकी भाषामें।

× × × ×

तुम अपने सामने किसीको कोई दोष करते देख लो और वह जान जाय कि तुमने उसके दोषको देख लिया है तो फिर उससे और कुछ भी मत कहो। वह स्वयं लज्जित हो रहा है। कह-सुनकर उसका संकोच भंगकर उसे ढीठ न बनाओ।

× × × ×

जैसे अपनी लाभ-हानिका खयाल रखते हो, वैसे ही दूसरोंके हानि-लाभका भी ध्यान रक्खो। किसीके यहाँसे माँगकर मँगवायी हुई चीज़ खराब न होने पावे तथा काम निकलते ही उसके यहाँ सावधानीके साथ पहुँच जाय। इस बातकी विशेष चिन्ता रक्खो,

नहीं तो उसको दुःख होगा और लोग चीजें मँगनी देनी बन्द कर देंगे, जिससे दूसरे गरीबोंका सुभीता जाता रहेगा। और जैसे दूसरोंसे चीज मँगवा लेते हो, ऐसे ही अपनी देनेमें भी कभी संकोच न करो। जहाँतक हो सके, किसीसे कोई भी चीज बिना ही माँगे अपना काम चलाओ। माँगकर न तो संकोचमें पड़ो और न किसीको संकोचमें डालो।

× × × ×

दुखी-गरीब भाई-बहिनोंके साथ विशेष प्रेम और सरलताका बर्ताव करो। उनकी सेवा करनेमें न तो ऐसा खयाल करो और न कभी यह उनपर प्रकट ही होने दो कि तुम बड़े आदमी या समर्थ हो, इससे उनका उपकार कर रहे हो या उनपर एहसान कर रहे हो। गरीब भाई-बहिनोंकी कभी कोई सेवा तुमसे बन जाय तो उनको कभी भूलकर भी उसका स्मरण तो कराओ ही मत बल्कि मन-ही-मन उनका उपकार मानो कि उन्होंने तुम्हारी सेवा स्वीकार की। परन्तु इस कृतज्ञताको भी अपने मनमें ही रक्खो। उनपर प्रकाश न करो। नहीं तो, शायद वे समझेंगे कि तुम अपने उपकारको उन्हें याद दिला रहे हो; इससे उन्हें संकोच होगा और अपनी गरीबीकी याद करके वे दुखी हो जायँगे। जो गिनानेके लिये किसीकी सहायता करता है वह तो उसे जलानेके लिये आग जलाता है। उनका ताप मिटानेके लिये नहीं।

× × × ×

गरीब दुखी गृहस्थोंकी सहायता या सेवा करना चाहो तो

अत्यन्त ही गुप्तरूपसे करो, हो सके तो उन्हें भी पता न लगने दो। और सेवा करके उसे सदाके लिये भूल जाओ, मानो तुमने कभी कुछ किया ही नहीं।

× × × ×

जैसे तुम्हें अपने समयका ध्यान रहता है, ऐसे ही दूसरोंके समयका भी ध्यान रक्खो। किसी भी भले आदमीके पास बिना काम जाकर न बैठो। शिष्टाचारसे या किसी कामसे जाना हो तो उसका सुभीता देखकर जाओ और अपना काम होते ही तुरन्त वहाँसे उठ जाओ। अनावश्यक बैठकर उसे संकोचमें मत डालो। यदि वहाँ और आदमी बैठे हों तो अपनी बातचीत जल्दी समाप्त कर लो, जिससे दूसरोंको भी बात करनेका अवसर मिले।

× × × ×

दो आदमी बात करते हों तो उनकी बात सुननेकी चेष्टा मत करो। वरं तुम्हारे वहाँ रहनेसे उन्हें संकोच होता हो तो वहाँसे अलग हट जाओ। और पीछे भी उनसे वह बात खोद-खोदकर मत पूछो। यदि उनकी कोई गुप्त बात है तो या तो तुम्हारे आग्रह करनेपर उन्हें बड़े संकोचमें पड़ना होगा या छिपानेके लिये झूठ बोलना पड़ेगा, जिससे आगे चलकर और भी हानियाँ होंगी।

× × × ×

विपत्तिके समय किसीसे सहायता लेना नितान्त आवश्यक हो और वह खुशीके साथ दे तो कृतज्ञ होकर उसे स्वीकार करो परन्तु उससे अनुचित लाभ न उठाओ। कोई आदमी दयालु

है, उसने तुम्हारी सहायता की है, तो फिर बार-बार उसे अपने दुःख सुनाकर तंग न करो।

× × × ×

किसी भी आदमीसे बात करनेके समय पहले उसकी बात सुनो। दुःखकी बात तो विशेष ध्यानसे सुनो। तुम्हारी दृष्टिमें चाहे वह दुःख छोटा हो परन्तु उसकी दृष्टिमें तो वही महान् है। उसे सान्त्वना दो, समझाओ, हो सके तो सहायता करो। परन्तु रूखा बर्ताव न करो। खास करके गरीबकी बात सुननेमें तो कभी भूलकर भी रूखेपनसे काम न लो। उसके साथ ऐसा बर्ताव करो, जिससे वह संकोच और भय छोड़कर कम-से-कम अपना दुःख तुम्हें आसानीसे सुना सके और तुम्हें अपना स्नेही समझने लगे।

× × × ×

दूसरेसे बात करते समय अपनी चर्चा न छेड़ो और न अपनी या अपने सम्बन्धी और घरवालोंकी ही बड़ाई करो। तुम्हारे सम्बन्धकी बात सुननेमें दूसरोंको उतना रस नहीं आता जितना उन्हें अपनी सुनानेमें आता है। तुम उनकी सुनो और उनसे उन्हींके सम्बन्धकी वैसी प्रिय बात करो, जिससे उन्हें सुख मिले और उनके हृदयमें तुम्हारे प्रति प्रेम और सौहार्द उपजे। जैसे माताके सामने उसके छोटे बच्चेकी बात करनेसे उसे सुख मिलता है और उसका हृदय खिलता है।

× × ×

बात करनेवालोंके बीचमें बोलकर उनकी बातोंका सिलसिला मत तोड़ो। और किसीके कुछ कहनेके समय बीचमें उसकी बातका खण्डन भी न करो। बिना बोले काम चल जाय तो बहुत ही अच्छी बात है। यदि खण्डन करना आवश्यक ही हो तो पीछे शान्ति और आदरके साथ नम्रतापूर्वक अपनी बात कहो।

× × × ×

इन्द्रियोंपर और मनपर विजय पानेकी चेष्टा करो, अपनी कमजोरियोंसे सावधान रहो, धीरजके साथ परमात्मापर भरोसा रखकर इन्द्रियोंको बुरे विषयोंकी ओर जानेसे रोको, मनको प्रभु-चिन्तन या सत्-चिन्तनके कार्यमें रोककर कुविषयोंसे हटाओ।

× × × ×

उखड़ो मत, झल्ला न उठो, झुँझलाना छोड़ दो, धीरतासे सुनो, अपनी झूठी निन्दा भी चुपचाप सुनो, फिर शान्त चित्तसे विचार करो, क्यों वह तुम्हारी निन्दा करता है? जरूर कोई कारण मिलेगा, अधिकांशमें तो अपनी कोई कमजोरी ही मिलेगी, उसे दूर करो और निन्दकका उपकार मानो।

× × × ×

फूलो मत, हर्ष-विह्वल न हो उठो, बड़ाई सुनकर अपनी कमजोरियोंको न भूल जाओ और उनसे लापरवाह न बनो। बड़ाईका कारण अपनेको समझकर अभिमान न करो, परमात्माकी कृपा मानो, जिसने तुमसे बड़ाईका काम करवाया। बड़ाई करने-

वालोंका उपकार मानो, पर परमात्मासे प्रार्थना करो कि वह बड़ाई न दें। बड़ाईको कभी गले न लगाओ, बड़ी मीठी छुरी है, अजब हलाहलकी मीठी घूँट है; बड़ाईसे सदा दूर भागो। अच्छा कार्य करो परन्तु बड़ाईके लिये नहीं।

× × × ×

'शिव'की इन बातोंपर ध्यान दो, याद रक्खो, तुमने इनका पालन किया तो तुम सचमुच शिक्षित हो जाओगे, यही सच्ची शिक्षा है।

शक्तिसञ्चयसे महाशक्तिपूजा

संयम, सात्त्विक आहार, नियमित परिश्रम, अहिंसा, मातृ-पितृगुरुसेवा, दीनसेवा, पवित्रता और ब्रह्मचर्य आदिके द्वारा शरीरको स्वस्थ रक्खो और उसमें शुद्ध शक्तिका सञ्चय करो ।

× × × ×

संयम, सात्त्विक आहार, अहिंसा, पवित्रता और ब्रह्मचर्यके साथ ही विवेक, वैराग्य, कामनादमन, सौम्यभाव, सर्वत्र भगवत्-दृष्टि, दया, मैत्री, उपेक्षा, प्रसन्नता, निरपेक्षता, परहितव्रत, निरभिमानिता, निर्भीकता, संतोष, सरलता, मृदुता और भगवच्चिन्तन आदिके द्वारा मनको शुद्ध करो और उसमें शुद्ध शक्ति-सञ्चय करो ।

सत्य, सुखकर, हितकर, प्रिय, परोपकारमय और भगवन्नाम-गुण और यश गान करनेवाले वचनोंद्वारा वाणीको शुद्ध करो और वाक्में शुद्ध शक्ति सञ्चय करो ।

× × × ×

जब तुम्हारे शरीर, मन और वाणी शुद्ध होकर तीनों शक्तिके भाण्डार बन जायँगे तभी तुम वास्तवमें स्वतन्त्र होकर महाशक्तिकी सच्ची उपासना कर सकोगे और तभी तुम्हारा जन्म-जीवन सफल होगा । याद रक्खो, जिस पवित्रात्मा पुरुषके शरीर, इन्द्रियाँ और मन अपने वशमें हैं और शुद्ध हो चुके हैं, वही स्वतन्त्र है । परन्तु जो किसी भी नियमके अधीन न रहकर शरीरका, इन्द्रियोंका और मनका गुलाम बना हुआ मनमानी करना चाहता है, कर सकता है या करता है वह तो उच्छृङ्खल है । उच्छृङ्खलतासे तीनोंकी शक्तियोंका नाश होता है और वह फिर महाशक्तिकी उपासना नहीं कर सकता । महाशक्तिकी उपासनाके बिना मनुष्यका जन्म-जीवन व्यर्थ है और पशुसे भी गया बीता है । अतएव शक्ति संञ्चय करके स्वतन्त्र बनो ।



विश्वास करो !

विश्वास करो—परमात्मा है, सर्वत्र व्याप्त है, सबमें ओतप्रोत है; विश्वास करो, वह परम दयालु है, हम कैसे भी क्यों न हों, वह सदा हमारा हित ही किया करता है; विश्वास करो, तुम उसे बड़े प्यारे हो, उसके अपने हो, उसीके स्वरूप हो, चाह करनेपर इस बातको प्रत्यक्ष कर सकते हो, वह तुमसे मिल सकता है। तुम उसे जान सकते हो, देख सकते हो और उसमें समा सकते हो।

× × × ×

विश्वास करो! तुम दीन-हीन नहीं हो, तुम शुद्धबुद्ध हो, तुम अमृत हो, तुम महान् हो, तुम्हारे अन्दर परमात्माकी शक्ति

भरी है, तुम चाहो तो सब कुछ कर सकते हो; दूसरी सृष्टि रचनेवाले विश्वामित्र, मुर्देको जिलानेवाले शुक्राचार्य, पत्थरमेंसे प्रत्यक्ष सशरीर भगवान्‌को प्रकट करानेवाले प्रह्लाद और माखन दिखा-दिखाकर आँगनमें कन्हैयाको नचानेवाली गोपियोंमें और तुममें वस्तुतः कोई फर्क नहीं है, तुम भगवान्‌को उतने ही प्यारे हो, जितने वे सब थे; तुममें इस बातका विश्वास नहीं है, यही कमी है, दृढ़ विश्वास करो और भगवान्‌के वैसे ही प्यारको प्रत्यक्ष पाकर परम सुखी हो जाओ। स्मरण रक्खो, आत्मविश्वास ही सफलताकी कुंजी है, विजयका मूल मन्त्र है और परमात्माकी कृपाको खींचनेवाला चुम्बक है।

× × × ×

विश्वास करो, जगत्‌में ऐसी कोई चीज नहीं, ऐसा कोई स्थान नहीं, ऐसी कोई विद्या नहीं, ऐसी कोई स्थिति नहीं जिसे तुम नहीं पा सकते। आत्मशक्तिपर विश्वास करो—दृढ़ विश्वास करो, अडिग निश्चय करो, फिर देखो, सफलता तुम्हारे चरणोंपर लोटती है। तुम्हारे मनकी चीजें तुम्हारे पास आनेमें ही अपने जीवनको सफल समझती हैं। तुम्हारी आत्मशक्तिके आगे कुछ भी असम्भव नहीं है।

× × × ×

विश्वास करो, तुम प्रभुके परम प्रिय हो, प्रभु सदा तुम्हारे साथ हैं, तुम सदा उनकी गोदमें हो, तुमपर उनकी इतनी अपार कृपा है कि जितनी तुम कल्पना भी नहीं कर सकते। उनका अभय हस्त सदा ही तुम्हारे मस्तकपर फिर रहा है, वे सदा ही

तुम्हारी रक्षा करते हैं। विश्वासकी कमीसे ही तुम इस सच्ची स्थितिसे वञ्चित हो रहे हो, विश्वास करो और निर्भय तथा निश्चिन्त हो जाओ।

× × × ×

विश्वास करो, एक ऐसी स्थिति है, जिसमें अज्ञान, मोह, आसक्ति, दुःख, अशान्ति, स्वार्थ, शोक, द्वेष, मोह, वैर, विषाद, विषमता, मेरे-तेरेकी कल्पना भी नहीं है। जहाँ पूर्ण ज्ञान है, पूर्ण प्रेम है, पूर्ण शान्ति है, पूर्ण समता है, पूर्ण प्रकाश है, पूर्ण आनन्द है, और वह स्थिति तुम्हें अवश्य मिल सकती है, तुम वही बन सकते हो।



निर्दोषता

प्रतिदिन सुबह उठते ही यह दृढ़ निश्चय करो कि आज मैं किसीपर क्रोध नहीं करूँगा। तुम्हारा निश्चय सच्चा होगा तो उस दिन क्रोध तुमपर अपना कोई प्रभाव नहीं डाल सकेगा। यही बात सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य आदिके सम्बन्धमें समझो।

× × × ×

तुम्हारा निश्चय आत्मविश्वासके बलपर अडिग होगा तो अपने निश्चयके अनुसार ही तुम्हें सफलता मिलेगी, दृढ़ निश्चयमें परमात्मा-की शक्ति निहित रहती है। निश्चय करो और उसी निश्चयसे सबके साथ प्यार करो।

× × × ×

चुभनेवाली बात किसीको न कहो, न किसीके दोषोंका प्रचार करो, न बुरा चाहो, इससे प्रेममें दोष आता है, वैर-विरोधकी नींव पड़ती है। तुम्हारा हृदय साधुतापूर्ण तो उस दिन समझा जायगा, जब तुम्हारे हृदयमें किसीके दोषोंकी स्फुरणा ही नहीं होगी। उस समय तुम स्वयं तो निर्दोष बन ही जाओगे।

× × × ×

असली निर्दोषता शरीरमें या वाणीमें नहीं होती, वह तो मनमें होती है। बहुत मीठे बोलनेवाले ठग, सरल मनुष्योंको मीठी-मीठी बातोंमें फुसलाकर उनका सर्वस्व लूट लिया करते हैं। वही शारीरिक विनय और मधुर वचन निर्दोष हैं, जो निष्कपट हों और हितकी शुद्ध इच्छासे प्रेरित होकर किये और बोले गये हों। पर जबतक विषय-चिन्तन होता है तबतक ऐसी निर्दोषता नहीं आ सकती।

× × × ×

विषयोंके चिन्तनसे चित्तको सदा हटाते रहो, विषयोंको महात्माओंने विष बतलाया है, वस्तुतः वह विषसे भी भयङ्कर है। विष तो एक ही बार प्राण लेता है पर विषय-विष तो जीवको पापोंके गहरे गर्त्तमें डालकर बार-बार मृत्युके चक्करमें डालता है।

× × × ×

विषयसे यहाँ संसारके भोग्य विषयोंसे अभिप्राय है जो आसक्तिवश केवल इन्द्रियोंकी तृप्तिके लिये व्यवहारमें आते हैं। उन विषयोंसे तात्पर्य नहीं जो मनुष्यकी सारी इन्द्रियोंको भगवत्-

की ओर लगाकर उसके मनको पवित्र बना देते हैं। ऐसे विषय तो अमृत हैं।

× × × ×

ऐसे विषय भी वे पाँच ही हैं—शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध। वैराग्य उत्पन्न करनेवाले, जगत्के मोहको दूर करनेवाले, अज्ञानका नाश करनेवाले, भगवत्के प्रति अहैतुक प्रेम पैदा करनेवाले संत और शास्त्रोंके 'शब्द'; वैराग्यको बढ़ानेवाले, विषय-वासनाको मिटानेवाले, तितिक्षा बढ़ानेवाले, भगवत्-चरणोंमें मन खींचनेवाले, वनस्थली, आश्रमभूमि, गंगातटरेणु, वल्कलवस्त्र, महात्मा और परमात्माकी चरणधूलि आदिके 'स्पर्श'; वैराग्य-वृद्धि करनेवाले, भगवान्में मन लगानेवाले, टूटे-फूटे महल, मृत मनुष्यकी भयानक मूर्ति, श्मशान और भगवान्की विभूतिसे पूर्ण सात्त्विक सुन्दरतासे युक्त 'रूप'; स्वादसे प्रीति हटानेवाले, योगमें सहायक, सात्त्विकताकी वृद्धि करनेवाले, भगवत्प्रेम उत्पन्न करनेवाले सात्त्विक भगवत्प्रसाद और रूखे-सूखे सादे 'रस'; और वैराग्य बढ़ानेवाली रोगी शरीर और मुर्दोंकी गन्ध तथा भगवान्में रुचि बढ़ानेवाली भगवद्विग्रहकी दिव्य 'सुगन्धि'—ये विषय सात्त्विक बुद्धिसे सेवनीय हैं। इनके सेवनसे अन्तःकरण पवित्र होता है और भगवान्में प्रीति बढ़ती है।

× × × ×

भगवत्प्रीतिका यह अर्थ नहीं, कि भगवत्प्रेमी जगत्का द्वेषी होता है। हाँ, संसार उसकी दृष्टिमें इस रूपमें नहीं रहता,

जैसा साधारण लोगोंकी दृष्टिमें है; भगवान् अपनी योगमायाका पर्दा हटाकर उसके सामने प्रकट हो जाते हैं, इससे सारा संसार उसे एक भगवान्के रूपमें ही परिवर्तित दीखता है। अतएव वह और भी अधिक उत्साहसे सब कुछ अर्पण करके विश्वरूप परमात्माकी सेवा करता है।

× × × ×

जबतक स्वार्थ है, तभीतक सेवामें त्रुटि रहती है, भगवत्-प्रेमीको अपना कोई स्वार्थ नहीं रहता, इसलिये उसकी जान-अनजानमें की हुई प्रत्येक क्रिया स्वाभाविक ही लोकका उपकार करनेवाली होती है, और वस्तुतः ऐसा पुरुष ही सच्चा स्वार्थी है क्योंकि उसका प्रत्येक कार्य अपने आत्मा—परमात्माके लिये ही होता है, अपने लिये कोई अहितकर कार्य कर ही नहीं सकता और उसके मनमें अपने अतिरिक्त कोई दूसरा रहता नहीं।

× × × ×

विषयप्रेमी मनुष्य ही स्वार्थी कहलाता है, पर वस्तुतः वह स्वार्थी नहीं होता। जो अपने ऊपर विपत्ति बुलाता है, वह स्वार्थका—अपने हितका—साधक कैसे समझा जा सकता है? वह तो इन्द्रियोंके भोगोंको बटोरनेमें ही—धन, स्त्री, स्वादिष्ट भोजन, यश, मान आदिके संग्रह करनेमें ही—लगा रहता है, इसीको वह अपना स्वार्थ समझता है। परन्तु इस बातको भूल जाता है कि इन्द्रिय और विषयोंके संयोगसे मिलनेवाला सुख अन्तमें विषवत् दुःखदायी होता है। स्वादवश कुपथ्यसेवनसे और

अतिरिक्त स्त्री-पुरुष-संगसे बीमारी होती है, धनके लोभसे नाना प्रकारकी विपत्तियाँ आती हैं, यश-मानके बटोरनेमें, दम्भ-छल करनेमें और उनके फल-भोगमें बड़े-बड़े कष्ट झेलने पड़ते हैं। परिणाममें नरक तो है ही। भला इसको स्वार्थ कैसे कहा जा सकता है? इसमें तो स्वार्थका—अपने हितका—नाश ही होता है। परन्तु जबतक यह स्वार्थ रहता है तबतक यथार्थ स्थायी सुख कभी नहीं मिल सकता।

× × × ×

भगवत्प्रेमी पुरुष तो मुक्तिके स्वार्थका भी त्यागी होता है, ऐसा सुना जाता है। फिर जगत्के मामूली पदार्थोंकी तो बात ही क्या है? इसलिये जहाँतक बने, विषयसुखजनित स्वार्थका त्याग करो, अपने शरीर, मन, बुद्धि और अपने कहे जानेवाले सब पदार्थ परमात्माके चरणोंमें अर्पण कर दो।

× × × ×

सच्चा समर्पण वही है, जिसमें कुछ भी न बच रहे। जहाँतक मनुष्य कुछ बचा रखता है, छिपा रखता है, वहाँतक समर्पण पूर्ण नहीं होता—पूर्ण समर्पण करो, अन्तरमें खोज-खोजकर एक-एक चीज उन्हें दे डालो; फिर देखो, उनकी प्रेमदृष्टिसे तुम किस प्रकार दिव्य आनन्दमें सराबोर हो जाते हो।

× × × ×

उस दिव्य आनन्दको पाना ही तुम्हारे जीवनका उद्देश्य है, वही तुम्हारा स्वरूप है। तुम विकारी नहीं हो, तुममें दुःखका

लेश नहीं है, सारा जगत् बदल जाय, सृष्टि या प्रलय हो जाय, तुममें कोई परिवर्तन नहीं होता। रोज-रोज सृष्टि-प्रलय होता है, सोना ही प्रलय है और फिर जागना ही सृष्टि है; परन्तु तुम सोनेकी दोनों अवस्थाओं—स्वप्न और सुषुप्ति—में और जाग्रत्में एक ही हो, वह-के-वह हो, सब देखते हो, सबका अनुभव करते हो, तुम्हारे देखनेके स्वभावमें कोई फर्क नहीं पड़ता। हाँ, तुम देखते हुए भी अपनेको देखनेवाला न समझकर जो भोगने और करनेवाला समझ लेते हो, यह तुम्हारी भूल है, यही दोष है—माया है, इसे हटा दो, फिर तुम्हारा दिव्यानन्दस्वरूप तत्काल प्रकाशित हो जायगा।

× × × ×

माया तबतक नहीं हटती, जबतक कि तुम उसे हटाना नहीं चाहते। मायाने तुम्हें नहीं बाँध रक्खा है, तुम्हींने मायाको पकड़ रक्खा है; छोड़ दो,—जिसकी है उसे दे दो। बस, उसी क्षण तुम मुक्त हो जाओगे।

× × × ×

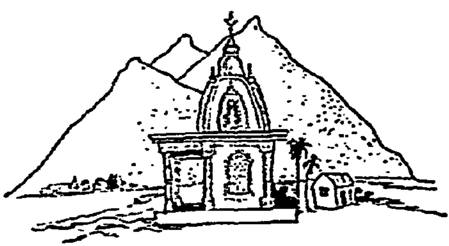
परन्तु तुम्हारी यह मायाकी पकड़ है बड़ी अद्भुत! तुम्हारी पकड़में आते ही मायाका जाल बिछ जाता है और तुम उसमें फँस जाते हो। तुम पकड़ते हो, जाल नहीं बिछाते, पर तुम्हारी पकड़में आते ही उसमें जाल बिछानेकी शक्ति आ जाती है, जिससे तुम उसे छोड़ना भूल जाते हो, चारों ओर तुम्हें बन्धन-ही-बन्धन दिखायी देते हैं।

× × × ×

इन बन्धनोंसे घबराकर जब उस जालसे निकलना चाहते हो, मायाको छोड़ना चाहते हो तब अनायास ही तुम्हें मायापति भगवान्‌का स्मरण होता है, तुम उन्हें पुकारते हो, व्याकुल होकर टेर लगाते हो, वे तत्काल आकर जाल काट डालते हैं और तब तुम मायाको छोड़—उनकी माया उन्हें सौंपकर, परम शुद्ध-आनन्दमय हो जाते हो।

× × × ×

मायाको छोड़ते ही भगवान्‌की गोदमें तुम्हें स्थान मिल जाता है, फिर तुम उनके और वह तुम्हारे हो जाते हैं, अन्तमें तुम और वह दोनों मिलकर एक हो जाते हो। उसके बाद जो कुछ होता है, उसे कोई न जान सकता है, न कह सकता है। 'नेति-नेति।'



दोष स्वभावमें नहीं है

काम, क्रोध, लोभ, असत्य, ईर्ष्या, द्वेष, मत्सर, वैर, अभिमान, नास्तिकता आदि दोष तुम्हारे स्वभावमें नहीं हैं। ये बाहरी हैं, इनको भूलसे तुमने अपने अन्तःकरणमें स्थान दे रक्खा है; ये चोर हैं, बटमार हैं, हिंसक हैं, तुम्हारे शत्रु हैं। मित्र बनकर मनमें बैठे हुए तुम्हारा सत्यानाश कर रहे हैं। इन्होंने तुम्हें भ्रममें डालकर तुम्हारी ऐसी समझ कर दी है मानो मन इनका अपना घर ही है। मनमें ये रहेंगे ही। बात ऐसी नहीं है। अतएव सावधान हो जाओ और अपने स्वरूपको सँभालो।

× × × ×

तुम परमात्माके सजातीय हो, परमात्माके सनातन अंश हो, दोष और विकारोंसे रहित हो, बड़े बलवान् हो। इन शत्रुओंके

शत्रुस्वरूपको समझकर, इनपर अपना बलप्रयोग करो और इन्हें सदाके लिये अपने मनमेंसे निकाल दो।

× × × ×

निश्चय करो! मैं परम शुद्ध हूँ, सर्वथा विकाररहित हूँ, मुझमें काम-क्रोधादि आ ही नहीं सकते। मुझमें ये बिल्कुल नहीं हैं। यदि कहीं लुके-छिपे दिखायी दें तो तुरन्त मार डालनेकी धमकी दो और अपना बल दिखाकर इन्हें डराकर भगा दो। निश्चय रक्खो, ये तभीतक रहते हैं जबतक तुम इनके सामने अपना शक्तिमान् रूप प्रकट नहीं करते। जहाँ तुम्हारे यथार्थ रूपको इन्होंने देखा, वहीं ये सब भाग जायँगे।

× × × ×

तुम पूर्णकाम हो, अतएव तुममें कामना नहीं हो सकती। तुम्हारा कोई पराया नहीं है, इससे तुमको किसीपर क्रोध नहीं हो सकता। तुम नित्यतृप्त आनन्दमय हो, इससे तुममें लोभ नहीं रह सकता। तुम सत्यस्वरूप हो, अतएव असत्यकी छाया भी तुम्हें स्पर्श नहीं कर सकती। ईर्ष्या, द्वेष, मत्सर और वैर तो दूसरेसे ही होते हैं। सबमें एक ही आत्मतत्त्व पूर्ण है, तब इनको स्थान ही कहाँ है? अभिमान किसी वस्तुका होता है, तुममें कोई वस्तु है ही नहीं, फिर अभिमान कहाँसे आता? नास्तिकता तो आत्माके नित्य अस्तित्वमें है ही कहाँ? सोचो! विचारो!! और इन दोषोंको जल्दी-से-जल्दी निकालकर अपने शुद्ध स्वरूपमें स्थिर हो जाओ।

शुद्ध वायुमण्डल

शरीर, वाणी और मनसे न तो स्वयं ऐसा कोई कार्य करो, जिससे वायुमण्डलमें दूषित भाव फैले, और न ऐसे दूषित वायुमण्डलमें रहो जिसका प्रभाव तुम्हारे शरीर, वाणी और मनपर हो। मनुष्य जो कुछ भी शरीरसे कर्म करता है, वाणीसे शब्दोच्चारण करता है और मनसे चिन्तन करता है, उसका प्रभाव वहाँके वायुमण्डलपर पड़ता है, उसके परमाणु वहाँके वायुमण्डलमें न्यूनाधिकरूपसे फैल जाते हैं, जो उस वायुमण्डलमें रहनेवाले प्रत्येक वस्तुपर अपना प्रभाव डालते हैं।

× × × ×

समस्त आकाशमें सर्वत्र वायु व्याप्त है। वायु ही शरीरके अंदर प्राणरूपसे रहता है। श्वासका अंदर जाना और बाहर निकलना वायुका ही कार्य है। यह अंदर जाने-आनेवाला वायु अंदर जाते समय बाहरके परमाणुओंको अंदर ले जाता है और बाहर निकलते समय भीतरके परमाणुओंको बाहर लाकर वहाँके वायुमण्डलमें छोड़ देता है।

× × × ×

भीतर गये हुए परमाणु जितनी अधिक या कम शक्तिके होते हैं, उतना ही अधिक या कम प्रभाव वे उस मनुष्यके मनपर डाल सकते हैं। परन्तु उन परमाणुओंको ग्रहण करनेवाला मन यदि उनसे प्रतिकूल भावोंके शक्तिशाली परमाणुओंसे भरा होता है तो उसपर उनका असर बहुत ही कम होता है, वे टकराकर वापस बाहर निकल जाते हैं, तथापि मनको स्पर्श कर आनेका कुछ-न-कुछ असर होता ही है, चाहे उस समय उसका पता न लगे। बार-बार यदि वैसे ही परमाणु अंदर जाते रहेंगे तो कालान्तरमें मनके अंदर रहे हुए प्रतिकूल परमाणुओंको दबाकर या नष्ट करके वे अपना पूरा अधिकार विस्तृत कर लेंगे।

× × × ×

बाहरसे जानेवाले परमाणुओंके अनुकूल परमाणु, यदि अंदर भी होते हैं तो उनका शीघ्र और अधिक असर होता है, जैसे किसीके मनमें धन या स्त्रीको प्राप्त करनेकी वासना है और इसी प्रकारकी वासनाको बढ़ानेवाले परमाणु श्वासके साथ वायुके सहारे-

से अंदर आवें तो इनका असर बहुत शीघ्र होता है और अधिक होता है।

श्वासके साथ अंदरसे बाहर जानेवाले परमाणु भी अपने न्यूनाधिक बलके अनुसार ही वायुमण्डलमें अधिक या कम दूरीतक फैलते हैं। जिनके मनकी संकल्पशक्ति बहुत बढ़ी हुई होती है, वे अपने मानसिक भावोंको बहुत दूरतक भेज सकते हैं और अपनेसे कमजोर संकल्पशक्तिवाले अधिकसंख्यक मनुष्योंके मनपर प्रभाव डाल सकते हैं। जिनकी मानसिक शक्ति कमजोर है, उनके विचार बाहर जाकर न तो बहुत दूरतक फैल सकते हैं और न अधिकसंख्यक लोगोंके मनोंपर प्रभाव ही डाल सकते हैं। यहाँ एक बात ध्यानमें रखनी चाहिये कि संकल्पशक्ति प्रायः उन्हींकी अधिक बढ़ती है जिनके संकल्प संयमपूर्ण, सत् या सात्त्विक होते हैं।

× × × ×

परन्तु बुरे संकल्पोंका भी कम प्रभाव नहीं पड़ता, क्योंकि आजकल तो वायुमण्डलमें प्रायः वैसे ही संकल्प अधिक फैले हुए रहते हैं और लोगोंके मन भी उन्हींके अनुकूल परमाणुओंसे भरे हुए हैं। यह सिद्धान्त है कि ग्रहण करनेवाला अपने सजातीय या अनुकूल पदार्थोंको ही शीघ्र और अधिकतासे ग्रहण करता है।

× × × ×

जिन लोगोंके मनोंमें विषाद, शोक, हिंसा, द्वेष, वैर, अभिमान, लोभ, दम्भ, क्रोध, काम, कायरता, नास्तिकता, ईर्ष्या और भय आदि दूषित संकल्प भरे होते हैं वे स्वयं अपना ही अनिष्ट

नहीं करते, प्रत्युत अपने संकल्पोंको वायुके द्वारा बाहर भेजकर आसपासके सारे वायुमण्डलको दूषित कर देते हैं, जिससे वहाँ रहनेवाले सभी मनुष्योंके मनपर उन दूषित संकल्पोंका किसी-न-किसी अंशमें असर होता है। और होते-होते वहाँका बाहरी और भीतरी वायुमण्डल इतना अधिक दूषित हो जाता है कि निर्दोष सरल मनके नये मनुष्यको वहाँ आकर प्रायः उसी प्रकारका बननेके लिये बाध्य होना पड़ता है। कई खास-खास स्थानों या महल्लोंमें ऐसी बातें प्रायः प्रत्यक्ष देखी जाती हैं।

× × × ×

जिस स्थानमें सच्चे साधुलोग अधिक बसते हैं, चाहे वे वाणीसे कोई भी उपदेश न देते हों या किसीसे मिलते-जुलते भी न हों, उस स्थानका वायुमण्डल शुद्ध और साधु भावोंसे भरा रहता है। जहाँ इसके विपरीत चोर-डाकू, व्यभिचारी, कपटी, कामी और क्रोधी मनुष्य रहते हैं, वहाँका वायुमण्डल, उन लोगोंके ऊपरसे अच्छे-अच्छे उपदेशकी बातें कहनेपर भी, दूषित रहता है। इसका पता समझदार मनुष्यको भलीभाँति लग जाता है, इसीलिये ऐसे महात्माओंके निवासमात्रमें परम लाभ माना गया है जो सर्वथा लोकसमाजसे अलग और मौन रहते हैं परन्तु जिनका अन्तःकरण केवल भगवद्भावोंसे भरा होता है। उनके अंदरसे निकली हुई भगवद्भावोंकी किरणें सारे वायुमण्डलमें फैलकर वहाँ सर्वत्र सदाचार, साधुशील और भगवत्प्रेमकी ज्योति छिटका देती हैं, और उसके प्रकाशको पाकर पामर प्राणी भी कृतार्थ हो जाते हैं।

× × × ×

वायुमें दो गुण हैं—शब्द और स्पर्श। वायु स्वयं अन्य किसी गुणवाला न होनेपर भी जहाँ स्पर्श करता है वहाँके परमाणुओंको लेकर उनको इधर-उधर बिखेर देता है। सुगन्धके स्थानसे सुगन्ध और दुर्गन्धके स्थानसे दुर्गन्ध लेकर उसे चारों ओर फैला देता है। इसी प्रकार सुन्दर संगीतध्वनि अथवा कर्कश कठोर शब्दको भी पकड़कर दूर-दूरतक उनका विस्तार कर देता है। इन बाहरी चीजोंके फैलानेमें ही इसका कार्य समाप्त नहीं हो जाता, यह मनके अंदरके भावोंको भी स्पर्श करता है और उन्हें ग्रहणकर बाहर लाकर इधर-उधर फैलाता है। यह अच्छे-बुरे भावोंके परमाणुओंको बाहरसे भीतर और भीतरसे बाहर ले जाया करता है। यह क्रिया वायुमें सदा-सर्वदा होती ही रहती है; इसलिये जहाँ संत बसते हैं वहाँका वायुमण्डल शुद्ध तथा असंतोंके निवासस्थलका अशुद्ध माना गया है। तीर्थोंमें ऐसे संतजन ही रहा करते थे, इसीसे उनको स्वयं-शुद्ध तथा दूसरोंको शुद्ध करनेवाले माना गया है।

× × × ×

श्रीरामचरितमानसमें कहा है कि काकभुशुण्डिजीके आश्रमके चारों ओर चार-चार कोसतक काम, क्रोधादि विकार नहीं आ सकते थे। अब भी कई महात्माओंकी सन्निधिमें पापके विचारोंका रुक जाना या मनमें बिल्कुल ही न उठना देखा-सुना गया है। जब मनके अंदर रहनेवाले अच्छे-बुरे विचारोंसे भी वायुमण्डल प्रभावित हो सकता है, तब वाणी और शरीरकी क्रियाओंका वायुमण्डलपर असर होना तो आसान बात है। अतएव काकभुशुण्डिजीके आश्रममें, जहाँ मनके सर्वथा भगवद्गत होनेके साथ ही नित्य

हरि-कथा हुआ करती थी, वैसा होनेमें कोई आश्चर्य या अनहोनी बात नहीं माननी चाहिये।

× × × ×

जिस प्रकार मनमें कभी बुरे विचार नहीं लाने चाहिये उसी प्रकार वाणीसे भी किसी बुरे शब्दका उच्चारण नहीं करना चाहिये। अश्लील, असत्य, अहितकर, व्यर्थ, अप्रिय, अपमानजनक, क्रोधभरी, दर्पपूर्ण, नास्तिकताका समर्थन करनेवाली, भय और अभिमानसे भरी वाणी कभी नहीं बोलनी चाहिये। ऐसी वाणीका उच्चारण करनेसे वहाँका वायुमण्डल दूषित होता है। जिसको लक्ष्य करके ऐसी वाणी बोली जाती है, उसपर तो बुरा असर होता ही है, परन्तु जहाँतक वह ध्वनि जाती है वहाँतकके प्राणियोंके मनोंपर वह बहुत बुरा असर डालती है। जैसे शूरताकी वाणीसे मनुष्यमें शूरता आती है, वैसे ही कायरोंकी भयभरी वाणी लोगोंको कायर बना देती है। रणवाद्य और चारणोंकी जोशीली कविताओं और संतोंकी वैराग्यकी वानियोंका अद्भुत प्रभाव प्रत्यक्ष देखा जाता है।

× × × ×

इसी प्रकार शरीरसे—किसी भी इन्द्रियसे ऐसी कोई चेष्टा नहीं करनी चाहिये जो वायुमण्डलको दूषित करनेवाली हो। सारांश यह कि मनको सदा शुद्ध संकल्पों और सत् विचारोंसे भरे रक्खो, वाणीके द्वारा सदा सत्य, हितकर, मधुर और उत्तम वचन बोलो और शरीरसे सर्वदा-सर्वथा उत्तम क्रिया करो। इसीमें अपना और जगत्का हित है। इसी प्रकार जहाँ ऐसे शुद्ध मन, वाणी

और शरीरवाले सज्जन महानुभाव रहते हों, उन्हींके समीप रहो और उन्हींका संग करो। न स्वयं बुरा वायुमण्डल पैदा करो और न बुरे वायुमण्डलमें निवास ही करो।

× × × ×

जो अपने मनमें वैरकी भावना रखता है वह जगत्में अपने वैरी उत्पन्न करता है; जो प्रेमके संकल्प करता है वह प्रेमियोंकी संख्या बढ़ाता है; जो भोगोंमें मन लगाता है, भोगोंमें रचा-पचा रहता है वह लोगोंमें भोगासक्ति बढ़ाता है; जिसके मनमें शूरता है वह शूरताका वातावरण पैदा करता है; जो कायर है वह कायरता फैलाता है; जो भक्त है वह भक्ति पैदा करता है; जो अभक्त है वह नास्तिकता फैलाता है; जो भयसे काँपता है वह आसपास भयका विस्तार करता है; जो निर्भय रहता है वह सबको निर्भय बनाता है; जो सुखी है वह जगत्को सुखी करता है; जो रात-दिन शोक, दुःख और विषादमें डूबा रहता है वह सबको यही चीजें देता है; और जो भगवान्में प्रेम करता है वह भगवत्प्रेमियोंकी संख्या बढ़ाता है। अतएव सब विषयोंको सर्वदा दूरकर केवल भगवत्प्रेमसे ही हृदयको सर्वथा भर दो। कदाचित् ऐसा न कर सको तो मनमें सदा सात्त्विक शुद्ध आदर्श विचारोंका पोषण करो और उन्हींको बढ़ाओ। ऐसा करनेसे तुम्हारे आसपासका वायुमण्डल सात्त्विक बन जायगा। सात्त्विक विचारोंकी क्रमशः वृद्धि होते रहनेसे तुम्हारी संकल्पशक्ति बढ़ जायगी, फिर तुम अपने सद्विचारोंको बहुत दूर-दूरतक लोगोंके हृदयकी गहराईतक पहुँचाकर सबको

सात्त्विक बना सकोगे। तुम सुखी बनोगे और बिना ही किसी उपदेश-आदेशके स्वभावतः ही जगत्‌के बहुत बड़े भागको भी सुखी बना सकोगे।

× × × ×

वे सात्त्विक और शुद्ध विचार ये हैं—अहिंसा, सत्य, शौच, दया, प्रेम, दान, क्षमा, संयम, त्याग, वैराग्य, निरभिमानिता, एकान्तप्रियता, कोमलता, सरलता, नम्रता, सेवाभाव, सहिष्णुता, परधर्मके प्रति सम्मान, द्वेषहीनता, समता, संतोष, गुणग्राहकता, दोषदृष्टिका अभाव, सुहृद्‌पन, ममता तथा अहंकारका अभाव, मान-बड़ाईकी सर्वथा अनिच्छा, सर्वभूतहित और भगवत्परायणता आदि।

× × × ×

बस, मन-वाणी-शरीरसे निरन्तर सावधानी और लगनके साथ इन्हीं सब सद्‌गुणों और सत्संकल्पोंको बढ़ाते रहो। स्वयं तर जाओगे और असंख्य प्राणियोंको तारनेमें सहायक होगे।

सच्चा सुधार

याद रक्खो, विश्वके रूपमें साक्षात् भगवान् ही प्रकट हो रहे हैं। जीवके रूपमें शिव ही विविध लीला कर रहे हैं। इसलिये तुम किसीसे घृणा न करो, किसीका कभी अनादर न करो, किसीका अहित मत चाहो। निश्चय समझो, यदि तुमने स्वार्थवश किसी जीवका अहित किया, किसीके हृदयमें चोट पहुँचायी तो वह चोट तुम्हारे भगवान्के ही हृदयमें लगेगी। तुम चाहे जितनी देर अलग बैठकर भगवान्को मनाते रहो परन्तु जबतक सर्वभूतोंमें स्थित भगवान्पर तुम स्वार्थवश चोट करते रहोगे तबतक भगवान् तुम्हारी पूजा कभी स्वीकार नहीं कर सकते।

× × × ×

सबका सम्मान करो, सबका हित चाहो, सबसे प्रेम करो, आत्माकी दृष्टिसे सब भेदोंको भुलाकर सबको नमस्कार करो। इसका यह अर्थ नहीं कि व्यवहारके आवश्यक भेदको भी मिटा दो। दुष्ट बुद्धिवाले पुरुषको जीवन्मुक्त महात्मा मत समझो। मूर्खको विद्वान् समझकर उसकी बात सुनोगे तो गिर जाओगे। विद्वान्‌को मूर्ख मानकर उसकी बात नहीं सुनोगे तो ज्ञानसे वञ्चित रह जाओगे। पापसे घृणा करो, असंयमसे द्वेष करो, दुष्ट आचरणोंसे वैर करो, कुविचारोंका अपमान करो, नास्तिकताका विनाश करो, जिनमें ये दोष हों उनसे अलग रहो, परन्तु उनसे आत्माकी दृष्टिसे घृणा न करो। स्वरूपमें अभेद और व्यवहारमें आवश्यक भेद रक्खो।

× × × ×

किसीको नीच, पतित या पापी मत समझो; याद रक्खो; जिसे तुम नीच, पतित और पापी समझते हो, उसमें भी तुम्हारे वही भगवान् विराजित हैं जो महात्मा ऋषियोंके हृदयमें हैं। सबको प्रेमदान करो, सबके प्रति सहानुभूति रक्खो। किसीकी निन्दा न करो। किसीकी निन्दा न सुनो। साधकको तो दूसरेकी निन्दा सहन ही नहीं होनी चाहिये। निन्दा सुननी हो अपनी सुनो, और करनी आवश्यक समझो तो अपनी सच्ची निन्दा करो।

× × × ×

निःस्वार्थभावसे सबके साथ प्रेम करो, अपने प्रेमबलसे दूसरोंके चरित्रको सुधारो; उन्हें ऊँचे उठाओ। तुम्हारे आचरण आदर्श होंगे तो तुम अपने स्वार्थहीन प्रेमके बलसे गिरे हुए भाईको

ऊँचा उठा सकोगे। याद रक्खो, शुद्ध आचरणयुक्त निःस्वार्थ प्रेममें बड़ा बल होता है।

× × × ×

अपनेको कोई चीज अच्छी नहीं लगती केवल इसी बुनियादपर किसी चीजको बुरी न मान लो। और न उसके ध्वंसकी चेष्टा करो। यह मत समझ बैठो कि तुम्हारा सर्वथा सुधार हो गया है, तुम्हारी सभी बातें सबके लिये कल्याणकारी हैं और तुम्हारे विचारोंमें भ्रम है ही नहीं। जबतक मनुष्यमें राग-द्वेष है, तबतक उसका निर्णय कभी सर्वथा निर्भ्रान्त नहीं हो सकता। कभी अपनेको दूसरोंसे श्रेष्ठ समझकर अभिमान न करो। अगर करोगे तो याद रक्खो, तुम्हारा पतन भी जरूर होगा। अतएव पहले अपने दोषोंको देखो, उनमें सुधार करो, फिर दूसरोंके सुधारकी चेष्टा करो।

× × × ×

सुधारका ठेका मत लो। न अपने मतको सर्वथा उपकारी समझकर किसीपर लादनेका हठ करो। सुधारका सच्चा रूप जो तुम समझते हो, सम्भव है वह नहीं हो, और तुम्हें मोह, परिस्थिति, स्वार्थ या द्वेषवश वैसा दीखता हो। सावधान, कहीं सुधारके नामपर संहार न कर बैठो। सुधार तुम्हारे किये होगा भी नहीं। सच्चे सुधारक तो भगवान् हैं जो प्रकृतिके द्वारा निरन्तर ध्वंस और निर्माणके रूपमें सुधार करते रहते हैं। निःस्वार्थी, जीवोंके सुहृद्, सर्वज्ञ तथा सर्वशक्तिमान् होनेके कारण भगवान्का किया हुआ सुधार परिणाममें निश्चय ही कल्याणकारी होता है, और

मोहवश इच्छा न करनेपर भी बाध्य होकर उसे सबको स्वीकार भी करना ही पड़ता है ।

× × × ×

भगवान् मंगलमय हैं, हमारे परम हितैषी हैं, सर्वज्ञ हैं, किस बातमें कैसे हमारा हित होता है, इस बातको जानते हैं। अतएव उनके प्रत्येक विधानका स्वागत करो । खुशीमें सिर चढ़ाकर स्वीकार करो । उनके हाथके दिये जहरमें अमृतका अनुभव करो; उनके हाथकी तलवारमें शान्तिकी छवि देखो, उनके कोमल करस्पर्शसे महिमाको पाये हुए सुदर्शनमें चरम सुखके शुभ दर्शन करो, और उनकी दी हुई मौतमें अमरत्वको प्राप्त करो । उनके प्रत्येक मंगल-विधानमें उनको स्वयमेव अवतीर्ण देखो ।

× × × ×

थोड़े-से जीवनमें इतना समय ही कहाँ है, जिसको परचर्चा और परनिन्दामें खर्च किया जाय । तुम्हें तो अपनी उन्नतिके कामोंसे ही कभी फुरसत नहीं मिलनी चाहिये । इतना अवश्य याद रक्खो कि दूसरोंकी अवनति करके—दूसरोंका बुरा करके तुम अपनी उन्नति या भलाई कभी नहीं कर सकते । तुम्हारा मंगल उसी कार्यमें होगा जिसमें दूसरेका मंगल भरा हो । कम-से-कम अपने मंगलके लिये, मोहवश, दूसरोंका अमंगल कभी न करो—न चाहो । अपने अमंगलसे दूसरोंका मंगल होता दीखे तो जरूर करो, यह विश्वास रक्खो कि दूसरोंका मंगल करनेवाले पुरुषका परिणाममें कभी अमंगल हो ही नहीं सकता ।

× × × ×

डरो ! पापसे, अभिमानसे, ममतासे, कामनासे, शोकसे, क्रोधसे, लोभसे, सम्मानसे, बड़ाईसे, ख्यातिसे, पूजासे, नेतृत्वसे, गुरुपनेसे, महंतीसे, पदवीसे, सभा-समितियोंसे, स्वेच्छाचारसे, उच्छृङ्खलतासे, मनमाने आचरणोंसे, इन्द्रियोंकी गुलामीसे, विषयासक्तिसे, मौज-शौकसे, विलासितासे, वाद-विवादसे, परचर्चासे, परनिन्दासे, परधनसे, परस्त्रीसे; और इनसे यथासाध्य सदा बचे रहो ।

× × × ×

किसी कामके सफल होनेपर यह मत समझो कि यह तुम्हारी करनीसे हुआ है । तुम तो निमित्तमात्र हो । सफलतापर बड़ाई मिलनेपर खुशीसे फूल मत उठो । यह तो संसारका नियम ही है । सफलतापर सभी बधाई और बड़ाई देते हैं तथा असफलतापर धिक्कार एवं निन्दा । आज बड़ाईमें फूलोगे तो कल निन्दा सुनकर रोना पड़ेगा । सदा न किसीको सफलता मिलती है, न असफलता ।

× × × ×

अपनी समझसे कोई बुरा काम न करो, बुरी नीयत मत रक्खो, फल बुरा हो तो शोक न करो । इसी प्रकार अपनी समझसे अच्छा काम करो, अच्छी नीयत रक्खो, फल तो विधाताके हाथ है । तुम अपना काम करो । विधाताके विधानको पलटनेकी व्यर्थ चेष्टा मत करो । यही सच्चा सुधार है ।

भगवान्‌की आज्ञा

जिसके मनमें—प्रेम, सत्य, दया, आनन्द, सरलता, समता आदि गुण भरे हैं वही यथार्थमें सुन्दर है, चाहे वह देखनेमें बदसूरत ही क्यों न हो । और जिसके मनमें—वैर, असत्य, क्रूरता, विषाद, कपट, विषमता आदि दोष भरे हैं, वह देखनेमें परम सुन्दर होनेपर भी यथार्थमें कुरूप है, अतएव मनमें दैवी गुणोंको भरनेकी चेष्टा करो ।

× × × ×

जिसका मन वशमें है, वही यथार्थमें स्वाधीन है । देहका बन्धन—बन्धन नहीं है, असली बन्धन है—मनका बन्धन । एक आदमी देहसे स्वतन्त्र है परन्तु यदि वह मनके अधीन है तो उसे सर्वथा पराधीन ही समझना चाहिये । मनपर विजय प्राप्त करनेवाला ही यथार्थ विजयी है । अतएव मनको वशमें करो ।

× × × ×

मनके वशमें करनेके लिये यदि तुम्हें विधि या नियमोंके बन्धनमें रहना पड़े तो अपना सौभाग्य समझो, यह बन्धन ही तुम्हें मनकी गुलामीसे मुक्त करेगा। उच्छृङ्खलता बन्धनकी गाँठोंको और भी कस देती है अतएव नियमोंकी श्रृंखलामें बँधे रहनेमें ही मंगल समझो।

× × × ×

जिसके मनमें भगवान्‌के प्रति भक्ति है, वही यथार्थ भक्त है, बाहरी आडम्बरवाला नहीं! भगवान् मनपर ध्यान देते हैं, भेषपर नहीं। इसलिये मनसे भगवान्‌की भक्ति करो, दुनियाके लोग चाहे तुम्हें भक्त न मानें।

× × × ×

किसीके साथ किसी बातको लेकर कुछ अनबन हो जाय और बर्तावमें कोई दोष आ जाय तो फिर उसके साथ अच्छा बर्ताव करनेके लिये इस बातकी बाट न देखो कि पहले वह मुझसे अच्छा बर्ताव करे। सम्भव है वह भी इसी प्रकार तुमसे अच्छे बर्तावकी प्रतीक्षा करता हो। ऐसी अवस्थामें तुम कभी अच्छा बर्ताव कर ही नहीं सकोगे। अतएव अपनी ओरसे पहलेसे ही अच्छा बर्ताव करना आरम्भ कर दो। तुम्हारे बर्तावसे उसपर असर पड़ेगा और वह भी अच्छा बर्ताव करने लगेगा।

× × × ×

किसीका उपकार करके उसे जनानेकी इच्छा न करो, उपकार जितना गुप्त रहेगा उतना ही वह अधिक मूल्यवान् होगा।

जना देनेसे उपकारकी कीमत घट जाती है और उपकार पानेवालेको कभी-कभी बड़े संकोचमें पड़ना पड़ता है।

× × × ×

सच्चे संत अपने संतपनेका ढिंढोरा नहीं पीटते, बल्कि उनमेंसे बहुतोंको अपने संतपनेका भी पता नहीं रहता। वे अपनेको साधारण मनुष्य मानते हैं परन्तु उनके संगसे बड़े-से-बड़े पापी भी तर जाया करते हैं।

× × × ×

संतोंका मिलना और उनको पहचानना बड़ा कठिन है। संत प्रायः छिपे रहते हैं। उनके ऊपरके आचरणोंसे लोग सहजमें उनको नहीं पहचान सकते; दूसरी बात यह है कि संतको साधारण पुरुष पहचाने भी कैसे; वह तो उसे अपनी बुद्धिके अनुसार ही परखना चाहता है परन्तु उसका वह परखना वैसा ही निरर्थक होता है जैसा पत्थर तौलनेके बड़े काँटेपर बहुमूल्य हीरेको तौलना।

भगवत्कृपासे ही संत मिला करते हैं, परन्तु उनका मिलना व्यर्थ नहीं जाता, उससे कुछ-न-कुछ फल मिलता ही है। यदि मनुष्य उन्हें यथार्थरूपसे पहचान ले तो वह भी वैसा ही बन जाय। संतोंको पहचानना ही उनसे यथार्थ मिलना है। इसीलिये संत-मिलनकी इतनी प्रशंसा की गयी है।

× × × ×

दुःख पापका फल है और सुख पुण्यका; आज जो लोगोंपर,

संसारपर नित-नये दुःख आ रहे हैं, इससे यह सिद्ध है कि संसारमें पाप बढ़ रहा है। बुद्धिमें पाप समा जानेके कारण पापकी वृद्धिमें ही उन्नति नजर आती है और इसीलिये लोग उसीमें लग रहे हैं। अतएव सुख चाहनेवालोंको जगत्के इन वर्तमान विपरीत-गामी लोगोंसे उलटा चलना चाहिये, क्योंकि पापका प्रतिपक्षी ही पुण्य होता है। और पुण्यका फल ही सुख है।

× × × ×

पापमें पुण्य, अकर्तव्यमें कर्तव्य, अधर्ममें धर्म या बन्धनमें मुक्तभाव होना विपरीत-बुद्धिका ही परिणाम है। आज संसारमें यही हो रहा है। इसका फल दुःख और बन्धन अवश्यम्भावी है। विपरीत ज्ञानका कारण अविद्या है जो भगवान्की कृपासे ही नष्ट हो सकती है। भगवान्की कृपा प्राप्त करनेके लिये भगवद्भजन परम आवश्यक है। अतएव मन लगाकर सबको श्रीभगवान्का भजन करना चाहिये।

× × × ×

जो संसारके विषयोंपर जितना कम सोचता है और जितना कम बोलता है वह आध्यात्मिक मार्गपर उतना ही शीघ्र आगे बढ़ सकता है। इसलिये जहाँतक बने चित्तमें जगत्के प्रपञ्चोंको बहुत ही कम आने दो और बिना आवश्यकताके जीभको कभी न खोलो। कम-से-कम बुद्धिमान् कहलानेके लिये तो कभी न बोलना ही अच्छा है।

× × × ×

जो जितना कम बोलता है उससे उतने ही कम मिथ्या बोले

जाने और परनिन्दा होनेकी गुंजाइश रहती है । मिथ्या और निन्दा बड़े पाप हैं, अतएव वाणीका संयम करके इन्हें यथासाध्य कम करो ।

× × × ×

वाणीसे होनेवाले पापोंमें चार प्रधान हैं—मिथ्या बोलना, किसीकी निन्दा या चुगली करना, कड़ुआ बोलना और व्यर्थकी बातें करना । अतएव जहाँतक बने कम बोलो और जो बोलो उसमें चार बातोंका ध्यान रक्खो—तुम्हारे शब्द उद्वेग पैदा करनेवाले न हों, मिथ्या न हों, प्रिय हों और हितकारी हों । ऐसा सब समय न बोल सको तो इन चारोंमेंसे तीन, दो या कम-से-कम एक सत्यपर तो डटे ही रहो ! नहीं तो वाणीसे भगवान्‌के गुण और नामका गान करो । मुँहसे व्यर्थ तो बोलो ही मत ! बोलना ही पड़े तो बोलो—रामकी बात या आवश्यक कामकी बात ! यही भगवान्‌की आज्ञा है । इसे याद रक्खो ।

पाप-तापसे मुक्ति

श्री भगवान्‌का नाम जपकर या भगवन्नामका संकीर्तन करके मनमें यह दृढ़ निश्चय करो कि मेरे पाप नष्ट हो गये हैं। अब मेरे मनमें पापके विचार नहीं उठ सकते। जैसे सूर्यके सामने अन्धकारके आनेकी सम्भावना नहीं है, इसी प्रकार भगवन्नामरूपी सूर्यके सामने पापरूपी अन्धकार नहीं आ सकता। इस कमजोरीको मनमें मत आने दो कि भगवान्‌के नामका जप करते-करते धीरे-धीरे पाप दूर हो जायँगे। यह भी कभी मत खयाल करो कि पाप करके नाम-जपसे उसे धो डालेंगे, यह तो बड़ा अपराध होगा। किसी बहाने भी पापको आश्रय मत दो।

निश्चय करो कि पाप जल गये—सदाके लिये भस्म हो गये। बार-बार भगवन्नाम-स्मरण और कीर्तनरूपी प्रकाशको सदा बनाये रक्खो। पहलेका अँधेरा मिट गया और निरन्तर प्रकाश रहनेसे नया आ नहीं सकता।

× × × ×

भगवान्के शरण होकर निर्भय बन जाओ। जो सर्वशक्तिमान् सर्वाधार विश्वपति देवाधिदेव भगवान्के शरण हो गया, उसको भय कहाँ? मनमें दृढ़ निश्चय करो कि मैं भगवान्के शरण हो गया, मैं उनका जन हो गया। अब मैं भगवान्की छत्रछायाके नीचे हूँ। उनकी शक्तिसे सर्वथा सुरक्षित हूँ। पाप-ताप मेरे समीप नहीं आ सकते! विषाद, शोक, व्याकुलता, उद्वेग, निराशा, क्षोभ, सन्देह, अश्रद्धा, ईर्षा, कायरता, द्वेष आदि दोष मुझमें रहे ही नहीं। मैं दैवी शक्तिको पाकर अपार शक्तिशाली बन गया हूँ। ईश्वरीय बल पाकर सब भयोंसे मुक्त हो गया हूँ।

× × × ×

मनमें दृढ़ निश्चय करो कि भगवान् मेरे हृदयमें सदा विराजमान हैं, भगवान्का निवासस्थान होनेके कारण उसमें जरा-सी भी अपवित्रता नहीं रही। काम, क्रोध, लोभ, मद, मोह, अभिमान, राग, द्वेष, मत्सर, वैर आदि दोष अब मेरे समीप नहीं आ सकते। जहाँ परम पवित्र भगवान् हैं वहाँ अपवित्र चीजोंका क्या काम?

× × × ×

निश्चय करो, भगवान्के हृदयमें आनेसे मेरे दिव्य नेत्र खुल

गये। अब मुझे सर्वत्र सब समय सब कुछ भगवान् ही दिखायी देते हैं। मेरा हृदय प्रेममय भगवान्को पाकर प्रेमसे भर गया। जगत्में कोई पराया नहीं, कोई घृणाके योग्य नहीं, कोई वैरी नहीं। सब मेरे अपने हैं, सब बन्धु हैं, सभी प्रियतम हैं! अब सबके साथ निःस्वार्थ प्रेम करना ही मेरा स्वभाव है। प्रेम ही मेरा जीवन है। प्रेम ही मेरा धर्म है।

× × × ×

भगवान्के शरण होकर और भगवान्का परम पवित्र नाम लेकर—अपने अंदर पवित्रता, निर्भयता, शक्ति, तेज, प्रकाश, प्रेम, निर्भरता, निष्कामता, संतोष और परम आनन्दका अनुभव करो। कभी खिन्न न होओ। कभी निराशा, उदासी, चाह, निर्बलता, द्वेष आदिको पास भी न फटकने दो।

× × × ×

सदा दृढ़ भावना करो, दृढ़ निश्चय करो कि भगवान् निरन्तर मेरे साथ हैं, मेरे हृदयमें हैं, मैं सदा-सर्वदा भगवान्की अजेय अपरिमित शक्तिके द्वारा सुरक्षित हूँ। मुझे किसीका भय नहीं है। पाप-ताप मेरे समीप आ ही नहीं सकते। मैं पवित्र हूँ, निष्पाप हूँ, शक्तिशाली हूँ, तन-मनसे नीरोग हूँ, आनन्दमय हूँ।

× × × ×

निश्चय करो, मैं जब भगवान्के शरण हूँ, तब मुझे किस बातकी कमी है। अब कुछ भी चाह नहीं रही। मैं तृप्त हूँ, मैं संतुष्ट हूँ, मैं अकाम हूँ, मैं आप्तकाम हूँ, मैं पूर्णकाम हूँ; क्योंकि भगवान्ने

मुझे अपना मान लिया है। अब भोग-मोक्ष किसी वस्तुकी वासना मेरे मनमें नहीं रही।

× × × ×

निश्चय करो, भगवान्‌ने जब मुझे अपनालिया तब मुझे किस बातकी चिन्ता रही ! वे मेरे लिये जो कुछ विधान करते हैं मेरे कल्याणके लिये ही करते हैं, क्योंकि वे मेरे ही अपने हैं। उनके समान मेरा हित करनेवाला परम सुहृद्, परम पिता, परम स्नेहमयी जननी, परम प्रियतम स्वामी, परम गुरु, परम आत्मा और कौन होगा ?

× × × ×

निश्चय करो, एक भगवान् वासुदेव ही विश्वरूप हो रहे हैं, विश्वका प्रत्येक पदार्थ उनका स्वरूप है। मैं उनसे अलग नहीं हूँ। मैं शरीर नहीं हूँ। उन्हींका अभिन्न अंश हूँ। मुझे आग जला नहीं सकती, हवा सुखा नहीं सकती, पानी भिगो नहीं सकता, शस्त्र काट नहीं सकते और मृत्यु मार नहीं सकती। मैं नित्य हूँ, सर्वगत हूँ, घन हूँ, अचल हूँ, अमर हूँ और सनातन हूँ।

× × × ×

ऐसा निश्चय होते ही तुम सबको वासुदेवमय देखकर पाप-तापसे सर्वथा छूटकर निर्भय हो जाओगे, अतुल शक्तिशाली बन जाओगे, तुम्हारा जीवन सफल और कृतकृत्य हो जायगा।

× × × ×

याद रक्खो, वास्तवमें ही तुम शरीर नहीं हो, तुम डरनेवाली या मरनेवाली चीज नहीं हो, तुम नित्य हो, तुम चेतन हो, तुम

आनन्दमय हो, तुम भगवान्‌के अभिन्न अंश हो, भूलसे दुःख पा रहे हो; बस, इस भूलको मिटा दो और नित्य परम सुखमय स्वरूपका अनुभव करो !

× × × ×

जबतक भोगोंमें आसक्ति और पापकार्यमें प्रवृत्ति बनी हुई है तबतक मनमें भगवान्‌के प्रति असली अनुराग नहीं पैदा हुआ। भगवदनुराग तो दूर रहा, भगवान्‌पर विश्वास होनेपर ही भोगोंमें राग और पापमें प्रवृत्ति नहीं हो सकती।

× × × ×

भगवान्‌के हृदयमें आते ही हृदय निर्मल हो जाता है। जैसे सूर्यके सामने अन्धकार नहीं ठहरता, इसी प्रकार भगवान्‌के प्रकाशके सामने विषय और पापका अँधेरा नहीं ठहर सकता। भगवन्नाम और भगवत्प्रेमके भरोसे विषय-सेवन और पाप करनेवाले मनुष्यके हृदयमें तो भगवान्‌का निवास नहीं हुआ।

× × × ×

ऐश्वर्य, सौन्दर्य, माधुर्य, ज्ञान, वैराग्य, यश, शक्ति, श्री सभी भगवान्‌में अपार हैं, और वे भगवान् हमारे परम प्रिय सुहृद् हैं, अकारण प्रेमी हैं, आत्मा हैं, ऐसा विश्वास हो जानेपर, मनुष्यके मनसे विषय-भोगकी इच्छा सर्वथा नष्ट हो जाती है। जब भोगकी इच्छा ही नहीं तब पाप कैसे हो ?

× × × ×

जो भगवान्‌का आश्रय ले लेता है, उसके लोक-परलोकके सभी

कार्योंकी सिद्धि सहज ही हो जाती है; क्योंकि श्रीभगवान्‌में सर्वसिद्धियाँ सब समय मौजूद हैं। इहलौकिक और पारलौकिक दोनों प्रकारकी उन्नति और सिद्धिके लिये मनुष्यको सर्वतोभावसे केवल विज्ञानानन्दघन सम्पूर्ण ऐश्वर्यमय परम सुहृद् भगवान्‌का ही आश्रय ग्रहण करना चाहिये।

× × × ×

विश्वासपूर्वक भगवान्‌का आश्रय ग्रहण कर लेनेपर संतोष, शान्ति, परम आनन्द, तृप्ति, ज्ञान, वैराग्य, सदाचार आदि गुण अपने-आप ही आ जाते हैं। भगवान्‌का आश्रयी मनुष्य ही विश्वबन्धु और समस्त विश्वका सच्चा सेवक बन सकता है।

× × × ×

जिसके मनमें प्रभुपर विश्वास नहीं है, वह कदापि सुख-शान्तिको प्राप्त नहीं हो सकता। सदाचार, ज्ञान, वैराग्य आदि गुण उससे दूर रहते हैं। वह अपने स्वार्थसाधनके लिये भाँति-भाँतिके अनुचित उपायोंका अवलम्बन कर स्वयं दुखी होता है और विश्वके प्राणियोंको दुखी करता है।

× × × ×

पाप, ताप, अशान्ति, उद्वेग, डाह, द्वेष, विषाद, असूया, चञ्चलता, वैर, हिंसा आदि दोष भगवान्‌में अविश्वासी मनुष्यके हृदयमें घर कर लेते हैं, जिनसे वह जन्म-जन्मान्तरोंमें भी सदा दुःखपूर्ण जीवन बिताता है।

× × × ×

भगवान् ही हमारे जीवन हैं, हमारे आत्मा हैं, इस बातपर विश्वास करो। भगवान्‌के प्रति ही अनुराग करो और एकमात्र भगवान्‌का ही आश्रय ग्रहण करो।

भगवान्‌के प्रति अनुराग और भोगोंमें अनासक्ति साथ-साथ ही होते हैं।

× × × ×

भगवान्‌के प्रति अहैतुक अनन्य निष्काम प्रेमसे ही मानव-जीवनकी पूर्णता होती है, परन्तु प्रेम यथार्थ होना चाहिये। भक्ति ही पूर्णता प्राप्तकर प्रेमके रूपमें परिणत हो जाती है, परन्तु वही भक्ति प्रेमरूप बनती है जो ज्ञान-वैराग्यसे युक्त होती है। जिस भक्तिमें भगवान्‌के स्वरूप, उनके महत्त्व और प्रभावका ज्ञान नहीं रहता, वह भक्ति अधूरी होती है, और जिस भक्तिमें भोगोंसे वैराग्य नहीं होता, उसमें भगवान्‌के साथ पूर्ण अनुराग होनेकी गुंजाइश नहीं रहती। वैराग्य और ज्ञान दोनों ही भक्तिके संरक्षक, वर्धक और सहायक हैं। इन दोनोंके अभावमें भक्तिका प्रवाह शुद्ध अनन्य प्रेमकी ओर न जाकर दम्भ और मोहकी ओर बहने लगता है, जिससे भक्ति दूषित हो जाती है और आगे जाकर वह दम्भके रूपमें परिणत हो जाती है। अतएव ज्ञान-वैराग्यको सहायकरूपमें साथ लेकर ही भक्तिके पवित्र मार्गपर चलकर प्रेम-रूपी परम लक्ष्यकी प्राप्ति करनी चाहिये।

× × × ×

पापको छोटा समझकर उससे कभी बेखबर न रहो; याद रक्खो, आगकी जरा-सी चिनगारी बड़े भारी शहरको जला देती है, एक छोटा-सा बीज बड़े भारी जंगलका निर्माण कर सकता है।

यह मत समझो कि काम-क्रोध-लोभका क्षणिक आवेश हमारा क्या बिगाड़ सकेगा, इनको समूल नष्ट करनेका सतत प्रयत्न करते रहो।

× × × ×

असावधानी विनाशको बहुत शीघ्र बुला लाती है; सचेत रहो, सावधान रहो, जीवन-महलके किसी भी दरवाजेसे काम-क्रोध-रूपी किसी भी चोरको अन्दर न घुसने दो और सावधानीके साथ, जो पहले घुसे बैठे हों, उन्हें दृढ़ता और शूरताके साथ निकालनेकी प्राणपणसे चेष्टा करते रहो; सावधानी ही साधना है।

× × × ×

पापोंके सरदार राग-द्वेष हैं और इनका राजा है अज्ञानजनित अहंभाव, उसे सिंहासनसे उतारकर भगवान्‌का गुलाम बना दो, और सिंहासनपर सदाके लिये भगवान्‌को बिठा दो, फिर ये गुलामके गुलाम दोनों राग-द्वेष सीधे हो जायँगे और राजा—भगवान्‌के अनुकूल ही बरतेंगे। द्वेष उन वृत्तियों या व्यापारोंसे लड़ेगा जो भगवान्‌के विरुद्ध होंगे और राग उनसे प्रेम करेगा जो भगवान्‌के अनुकूल होंगे।

× × × ×

'अहं' का साथी एक और है वह है 'मम'। इस 'मम' को भगवान्‌के चरणोंमें बाँध दो, यानी यह समझ लो कि बस, भगवान्‌के चरण ही मेरे हैं, 'मम' को और कहीं भी भटकने मत दो। फिर इस 'मम' के बन्धनमें प्रेमकी डोरी फँसाकर टानो, भगवान् तुम्हारे पास आप ही चले आवेंगे। तुम समस्त पाप-तापोंसे सदाके लिये छूटकर परमानन्दमय बन जाओगे।

× × × ×

दोषोंसे बचनेके उपाय

बुरे संगसे सदा दूर रहो; बुरा संग बुरे मनुष्यका ही नहीं होता। बुरी जगह, बुरा अन्न, बुरा ग्रन्थ, बुरा दृश्य, बुरी बात, बुरा वातावरण आदि सभी बुरे संग हैं। लगातारके बुरे संगसे बुरे परमाणुओंके द्वारा अन्दरके अच्छे परमाणु जब दब जाते हैं, तब बुरी बातें स्वाभाविक ही अच्छी मालूम होने लगती हैं। जैसा मन होता है वैसी ही दृष्टि होती है और जैसी दृष्टि होती है वैसा ही दृश्य दीखता है। सच्चे साधुको प्रायः सभी साधु दिखायी पड़ते हैं, चोरको चोर दीखते हैं, कामीको सब कामी और लोभीको लोभी दीखते हैं।

× × × ×

बुरे वातावरणमें रहते-रहते चित्त बुरा हो जाता है; फिर उसमें बुरे संकल्प उठते हैं; जिसके चित्तमें बुरे संकल्प उठते हैं, उसके समान दुःखी तथा अपराधी और कौन होगा ? क्योंकि वह अपने चित्तके बुरे संकल्पोंको जगत्में फैलाकर दूसरोंको भी बुरा बनाता है।

× × × ×

चित्तमें सदा सत्-संकल्प रहने चाहिये। सत्-संकल्पके लिये सत्-संग, सत्-आलोचन, सद्ग्रन्थपाठ, सद्गुरुसेवन आदिकी आवश्यकता है। जिसका चित्त सत्-संकल्पसे भरा है, वही सुखी और परोपकारी है; क्योंकि वह अपने संकल्पोंको जगत्में फैलाकर दूसरोंको भी सन्मार्गपर लाता है।

× × × ×

यह निश्चय करो कि मेरे चित्तमें कभी बुरी कल्पना नहीं आ सकती, मैं पवित्र हूँ, भगवान्‌की कृपासे मेरा हृदय शुद्ध हो गया है। सर्वशक्तिमान् भगवान्‌का अभय हाथ सदा मेरे सिरपर है। मैं उनकी छत्रछायामें हूँ। पाप-ताप मेरे पास नहीं आ सकते।

× × × ×

यह निश्चय करो कि मैं दुःखके संसारसे परे हूँ। मुझमें दुःख नहीं आ सकता। जगत्में मेरे प्रतिकूल कुछ नहीं हो सकता; सबमें अनुकूल भावना करो और नित्य सुखी रहो।

× × × ×

रोगकी अवस्थामें यह निश्चय करो कि बीमारी शरीरको है,

मैं तो नित्य निरामय हूँ, मुझको कभी कोई रोग नहीं हो सकता। मैं सबका द्रष्टा हूँ। शरीर क्षणभङ्गुर है, नाशवान् है, किसी दिन नाश होगा ही। मैं अज हूँ, अविनाशी हूँ, अमर हूँ।

× × × ×

शोकके प्रसंगमें यह निश्चय करो कि मेरे लिये कभी शोकका प्रसंग आ ही नहीं सकता; प्रकृति जादूभरी है, और परिवर्तनशीला है, इसमें उपजने और नष्ट होनेका खेल सदा होता ही रहता है। रूप बदलता है, मूल वस्तु कभी नष्ट नहीं होती, फिर मैं शोक क्यों करूँ? अथवा, यह निश्चय करो कि मेरे स्वामी भगवान् जो कुछ विधान करते हैं, उसीमें मेरा परम कल्याण है, यह ध्रुव सत्य है। शोक करना स्वामीके विधानपर असंतोष प्रकट करना है जो सर्वथा अनुचित है। वस्तुतः भगवान् हमारी भलाईके लिये ही सब कुछ करते हैं।

× × × ×

कामके प्रसंगपर यह विचार करो कि जगत्‌की सारी सुन्दरता मेरे प्रभुकी सुन्दरताका एक कण है। मैं मोहवश उस परम सुन्दरको छोड़कर हाड़-मांसके थैलेपर आसक्त हो रहा हूँ, यह अज्ञान है। मैं अपने प्रभुकी कृपासे इस अज्ञानके वश नहीं हो सकता। मैं निर्मल हूँ, मैं असंग हूँ, मेरे हृदयमें राम हैं, मैं रामका हूँ, राम मेरे हैं, राम मुझे अपना स्वरूप मानते हैं, अतः मेरे निकट काम नहीं आ सकता। मेरे रामकी सुन्दरताके सामने सारी सुन्दरताएँ तुच्छ हैं, सूर्यके सामने जुगनूके समान भी नहीं हैं।

× × × ×

क्रोधका अवसर आनेपर चुप रह जाओ और विचार करो, जगत्में सब ओर भगवान्का विस्तार है। भगवान् ही विश्वरूपमें प्रकाशित हैं; मैं भगवान्पर क्रोध कैसे करूँ, उनका अपमान कैसे करूँ! और निश्चय करो कि मैं क्रोधसे परे हूँ। मेरा हृदय नित्य क्षमासे पूर्ण है। सारे प्राणियोंके प्रति प्रेम, मैत्री, क्षमा और दया करना ही मेरा स्वभाव है। कठोर-से-कठोर वचन और व्यवहारको मैं सहर्ष सहन करूँगा। मेरे मनमें किसीके प्रति द्वेष नहीं है, इसलिये मैं क्रोधके वश कभी नहीं हो सकता।

× × × ×

लोभकी बात सामने आनेपर मनमें विचार करो और निश्चय करो कि मैं पूर्ण हूँ, मैं किसीका धन नहीं चाहता। मेरे लिये जगत्में लुभानेवाली वस्तु कोई भी नहीं है। मुझमें कोई कामना, आकांक्षा नहीं है, फिर किसी चीजके लिये मुझको लोभ कैसे हो सकता है?

× × × ×

कुछ समय प्रतिदिन एकान्तमें बिताओ, मौन रहो। शरीरका एकान्त और वाणीका मौन भी बहुत ही आवश्यक और लाभकारी है। एकान्त और मौन अवस्थामें भगवान्का ध्यान और भगवन्नाम-का जप करो। मनके एकान्त और मौनके लिये साधन करो। मनमें किसी भी संकल्पका न उठना ही मनका एकान्त और मौन है। चित्त सर्वथा निर्विषय होकर केवल अचिन्त्य परमात्माके स्वरूपमें लग जाय। संसार और शरीरका कहीं मनमें पता ही न रहे।

× × × ×

वाणीका इतना संयम तो अवश्य ही कर लो—विना कार्यके अनावश्यक बातें बिल्कुल न करो, किसीकी निन्दा-चुगली न करो, भरसक किसीकी स्तुति भी न करो, अश्लील शब्दोंका उच्चारण न करो, कड़ुए शब्द न बोलो, असत्य और दूसरेका अहित करनेवाले शब्द तो कभी मुँहसे भी न निकालो।

× × × ×

मनमें भय, अशान्ति, उद्वेग और विषादको स्थान न दो। भगवान्‌की दया अथवा आत्माकी पवित्रता और नित्यतापर विश्वास रखकर सदा शान्त, निर्भय और प्रसन्न रहनेका यत्न करो।

× × × ×

उत्तेजनासे सदा बचे रहो, धीरज कभी न छोड़ो। उत्तेजना और अधैर्यसे शारीरिक और मानसिक रोग होते हैं, जिनसे छूटना मुश्किल हो जाता है।

× × × ×

किसीका अनादर न करो, किसीसे घृणा न करो, किसीका जी न दुखाओ। स्वयं सह लो, परन्तु स्वार्थवश किसीको कष्ट सहनेके लिये बाध्य कभी न करो। किसी भी अच्छे काममें लगे हुए पुरुषका दिल न तोड़ो, उसे उत्साह दिलाओ और यथासाध्य उसके अच्छे काममें सहायता दो।

× × × ×

गरीब, दीन, रोगी और आतुरोंमें भगवान्‌को विशेषरूपसे देखकर उनकी सेवा करो और बड़े आदर तथा प्रेमके साथ उनसे

मिलो, उन्हें अपनाओ, और यथासाध्य उनके दुःख दूर करनेमें सहायता दो तथा उन्हें अपना बनाकर प्रभुके भजनमें लगा दो।

× × × ×

हृदयकी सरलतामें देवत्व या ऋषित्व है, और कपटमें असुरत्व है। मनको सरल बनाओ। बात न बना सको तो चिन्ता नहीं। सम्भव है कपटी और वाक्-चतुर मनुष्योंकी नजरमें तुम मूर्ख समझे जाओ अथवा लोगोंकी भ्रमपूर्ण दृष्टिसे तुम ऐहिक उन्नति न कर सको, परन्तु निश्चय रक्खो, कपट-चातुरीसे अपनेको बुद्धिमान् सिद्ध करनेवालोंसे तुम निश्चय ही बहुत ऊँची स्थितिपर हो।

× × × ×

एक महात्माने कहा था—आजकल प्रायः लोगोंको ऊपरसे सुहावनी बातें कहनी आ गयी हैं, परन्तु हृदयमें दम्भ-कपट भर गया है। पहलेके लोग चाहे बोलना न जानते हों परन्तु उनका हृदय सरल था। वे अपना दोष छिपाना नहीं जानते थे। सावधान, दम्भी बनकर सुहावनी वाणी बोलनेवाले सभ्य बननेकी अपेक्षा सरल ग्रामीण बनना सच्ची उन्नतिका लक्षण है। सरलतामें पवित्रता है और कपटमें अपवित्रता है। कपटी मनुष्य दूसरेको जितना नुकसान पहुँचाता है उससे कहीं अधिक अपनी हानि करता है।

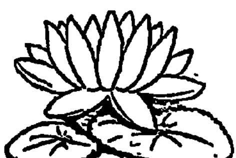
× × × ×

अपने पापोंको छिपाओ मत, और पुण्योंको प्रकट न करो। छिपानेसे पाप बढ़ेंगे और प्रकट करनेसे पुण्य घटेंगे। पुण्यको कपूर समझो, बोतलका मुँह खोलकर रक्खोगे तो उड़ जायगा।

पाप बुरी वस्तु है, छिपाकर रक्खोगे तो अन्दर-ही-अन्दर जहरीली गैस पैदा करके हृदयके तमाम शुद्ध भावोंको नष्ट कर देगा।

× × × ×

जीवनके एक-एक क्षणको मूल्यवान् समझो और बड़ी सावधानीके साथ प्रत्येक क्षण भगवच्चिन्तन या आत्मचिन्तन करते हुए लोकहितके कार्यमें बिताओ। तुम्हारा कोई क्षण ऐसा नहीं जाना चाहिये जिसमें किसीका तुम्हारे द्वारा अहित हो जाय। अहित वाणी और शरीरसे ही होता हो सो बात नहीं है; यदि तुम्हारे मनमें बुरा विचार आ गया तो मान लो तुम अपना और दूसरोंका अहित करनेवाले हो गये। बुरा विचार कभी मनमें न आने दो। यदि पूर्वसंस्कारवश आ जाय तो उसको तुरन्त निकाल बाहर कर दो। बुरे विचारको आश्रय कभी मत दो, उसकी ओरसे लापरवाह न रहो।



निष्काम कर्म

सारे संसारकी उत्पत्ति भगवान्‌से हुई है और भगवान् ही सारे जगत्‌में परिपूर्ण हैं। मनुष्य अपने कर्मोंद्वारा इन भगवान्‌की पूजा करके परम सिद्धिरूप भगवान्‌को सहज ही प्राप्त कर सकता है। जो जिस कार्यको करता हो, जिसका जो स्वाभाविक कर्म हो, उसीको करे; न तो सबके कर्म एक-से हो सकते हैं और न एक-सा बनानेकी व्यर्थ चेष्टा ही करनी चाहिये। नाटकमें सभी पात्र एक ही पात्रका पार्ट करना चाहें तो खेल ही बिगड़ जाय। अपनी-अपनी जगह सभीकी जरूरत है और सभीका महत्त्व है। राजा और मजदूर दोनोंकी ही आवश्यकता है। और दोनों ही अपना-

अपना महत्त्व रखते हैं । इसलिये कर्म न बदलो, मनके भावको बदल डालो । कर्मका छोटा-बड़ापन बाहरी है । महत्त्व तो हृदयके भावका है । ऊँच-नीचका भाव रखकर रागद्वेषपूर्वक पराये अहितके लिये लोकदृष्टिमें शुभ कर्म करनेवाला नरकगामी हो सकता है, शास्त्रविधिके अनुसार किसी फलकी इच्छासे यज्ञ, दान, तप आदि सत्कर्म करनेवाला ऐश्वर्य और स्वर्गादि विनाशी फलों और भोगोंको प्राप्त कर सकता है । और स्वार्थको सर्वथा छोड़कर निष्कामभावसे श्रीभगवान्‌की प्रीतिके लिये भगवदाज्ञानुसार साधारण स्वकर्म करता हुआ ही मनुष्य परम सिद्धिरूप परमात्माको पा सकता है । मनुष्य इस प्रकार अपने प्रत्येक कर्मको मुक्ति या भगवत्प्राप्तिका साधन बना सकता है ।

× × × ×

अतएव मनसे दम्भ, दर्प, अभिमान, मान, बड़ाई, काम, क्रोध, वैर, लोभ, असत्य, हिंसा आदि दोषों और दुर्गुणोंको निकालकर अथवा यथाशक्ति इन दोषोंका दमन करते हुए केवल भगवत्-प्रीत्यर्थ, भगवान्‌की आज्ञा समझकर और भगवान्‌की सेवाके भावसे अपने-अपने कार्योंको करो । हर एक कर्मसे सदा सर्वत्र स्थित भगवान्‌की पूजा करो; याद रक्खो—जिस कर्ममें काम, क्रोध, लोभ आदि नहीं हैं, जिसमें भगवान्‌को छोड़कर अन्य किसी भी फलकी आकांक्षा नहीं है, जो कर्म कर्मकी अथवा फलकी आसक्तिसे नहीं, किन्तु भगवान्‌के दिये हुए स्वाँगका खेल अच्छी तरह खेलनेकी इच्छा-से निरन्तर भगवत्-स्मरण करते हुए भगवत्प्रीत्यर्थ सात्त्विक उत्साह-पूर्वक किया जाता है उसी विशुद्ध कर्मसे भगवान्‌की पूजा होती

है। यह पूजा अपने किसी भी उपर्युक्त दोषोंसे रहित विहित स्वकर्मके द्वारा प्रत्येक स्त्री-पुरुष सहज ही अपने-अपने स्थानमें रहते हुए ही कर सकता है। केवल मनके भावको बदलकर कर्मका प्रवाह भगवान्‌की ओर मोड़ देनेकी जरूरत है। फिर प्रत्येक कर्म तुम्हारी मुक्तिका साधन बन जायगा और अपने सहज कर्मोंको करते हुए भी तुम भगवान्‌को प्राप्तकर जीवनको सफल कर सकोगे।

× × × ×

यदि तुम व्यापारी या दूकानदार हो तो यह समझो कि मेरा यह व्यापार धन कमानेके लिये नहीं है, श्रीभगवान्‌की पूजा करनेके लिये है। लोभवृत्तिसे नहीं, जिन-जिनके साथ तुम्हारा व्यवहार हो उन्हें लाभ पहुँचाते हुए अपनी आजीविका चलानेमात्रके लिये व्यापार करो। याद रक्खो—व्यापारमें पाप लोभसे ही होता है। लोभ छोड़ दोगे तो किसी प्रकारसे भी दूसरेका हक मारनेकी चेष्टा नहीं होगी। वस्तुओंका तौल-माप या गिनतीमें ज्यादा लेना और कम देना, बढ़ियाके बदले घटिया देना और घटियाके बदले बढ़िया लेना, आढ़त-दलाली वगैरहमें शर्तसे ज्यादा लेना आदि व्यापारिक चोरियाँ लोभसे ही होती हैं। परन्तु केवल लोभ ही नहीं छोड़ना है, दूसरोंके हितकी भी चेष्टा करना है। जैसे लोभी मनुष्य अपनी दूकानपर किसी ग्राहकके आनेपर उसका बनावटी आदर-सत्कार करके उसे ठगनेकी चेष्टा करते हैं वैसे ही तुम्हें कपट छोड़कर ग्राहकको प्रेमके साथ सरल भाषामें सच्ची बात समझाकर उसका हित देखना चाहिये। यह समझना चाहिये कि इस ग्राहकके रूपमें साक्षात् परमात्मा ही आ गये हैं, इनकी जो

कुछ सेवा मुझसे वन पड़े वही थोड़ी है। यों समझकर व्यापार करोगे तो तुम श्रीभगवान्‌के कृपापात्र वन जाओगे, और वह व्यापार ही तुम्हारे लिये भगवत्प्राप्तिका साधन वन जायगा।

× × × ×

यदि तुम दलाल हो तो दो व्यापारियोंको झूठी-सच्ची बातें समझाकर अपनी दलालीके लोभसे किसीको ठगाओ मत। दोनोंके रूपमें ईश्वरके दर्शन कर सत्य और सरल वाणीसे दोनोंकी सेवा करनेकी चेष्टा करो। याद रक्खो, अभी नहीं तो आगे चलकर तुम्हारी इस वृत्तिका लोगोंपर बहुत प्रभाव पड़ेगा। यदि न भी पड़े कोई हर्ज नहीं, तुम्हारी मुक्तिका साधन तो वन ही जायगा।

× × × ×

यदि तुम राजा या जमींदार हो तो जिस किसी प्रकारसे कर या लगान आदि वसूल करके उसे मौज-शौकमें या अपनेसे ऊँचे शासकोंको खुश करनेमें खर्च करना छोड़ दो। अपनी प्रजा-को—किसानोंको अपने ही परिवारके लोग समझकर उनके सुख-दुःखका खयाल करो, दुःखमें उन्हें न सताओ, अपने खर्चमें कमी करके भी अनुचित लगान माफ कर दो; याद रक्खो, तुम्हारे या तुम्हारे किसी कर्मचारीके द्वारा गरीब प्रजाके किसी आदमीपर कोई जुल्म न होने पावे। गरीबोंका, स्त्रियोंका सम्मान और आदर करो, तथा उनके बच्चोंपर अपने बच्चों-जैसा ही प्यार करो; उनके आशीर्वादसे तुम फलो-फूलोगे। तुम्हें भगवत्प्राप्ति करनी हो तो जमींदारीके द्वारा ही उसे भी कर सकते हो, उसका तरीका यह है कि प्रजाके स्त्री-पुरुषोंको अपने अन्नदाता श्रीभगवान्‌का स्वरूप

समझो, और अपने राजा या जमींदारके स्वाँगके अनुसार—जो भगवान्‌का ही दिया हुआ है—उनसे न्याय तथा सहजमें ही प्राप्त होनेयोग्य 'कर' उन्हें सुख पहुँचानेकी नीयतसे—उन्हींके पूजार्थ वसूल करो, तदनन्तर मेहनतानेके रूपमें उसमेंसे कुछ अंश अपने खर्चके लिये रखकर शेष सब सुन्दर तरीकेसे उन्हींकी सेवामें लगा दो। तुम्हें राजा या जमींदारका स्वाँग इसीलिये दिया गया है कि तुम प्रजाका धन उनसे लेकर व्यवस्थापूर्वक उन्हींके हितके लिये खर्च करो। उनकी सँभाल, रक्षा और सेवाका काम तुम्हारे जिम्मे है। उन्हें सताकर मौज उड़ानेका तुम्हें कोई अधिकार नहीं है। इससे तो उनके साथ ही तुम्हारा दुःख भी बढ़ेगा ही। यदि उन्हें भगवान्‌का स्वरूप समझकर अपनी योग्यताके अनुसार भगवान्‌की प्रीतिके लिये ही भगवदाज्ञानुसार उनपर शासन करोगे तो उसीके द्वारा तुम्हें भगवत्प्राप्ति हो जायगी।

× × × ×

तुम हाकिम हो तो अपने स्वाँगके अनुसार दयापूर्ण न्याय करो, तुम्हारे इजलासमें कोई भी मुकद्दमा आवे तो उसे ध्यानसे सुनो, रिश्वत खाकर या अन्य किसी भी कारणसे पक्षपात और अन्याय न करो। प्रत्येक न्याय चाहनेवालेको भगवान्‌का स्वरूप समझकर न्यायरूप सामग्रीसे उसकी पूजा करो, उसे न्याय-प्राप्तिमें जहाँतक हो सहूलियत कर दो। और सेवाके भावसे ही अपनेको मैजिस्ट्रेट या जज समझो, अफसर नहीं। तुम्हारी इसी निष्काम सेवासे भगवान्‌की कृपा होगी और तुम भगवत्प्राप्ति कर सकोगे। तुम वकील हो तो पैसेके लोभसे कभी अन्यायका पैसा

मत लो, झूठी गवाहियाँ न बनाओ, किसीको तंग करनेकी नीयत न रक्खो। प्रत्येक मवक्किलको भगवान्‌का स्वरूप समझकर भगवत्-सेवाके भावसे उचित मेहनताना लेकर उनका न्याय पक्ष ग्रहण करो। तुम चाहो तो भगवान्‌की बड़ी सेवा कर सकते हो। और सेवासे तुम्हें भगवत्प्राप्ति हो सकती है।

× × × ×

तुम डॉक्टर या वैद्य हो तो रोगीको भगवान्‌का स्वरूप समझकर उसके लिये सेवाके भावसे ही उचित पारिश्रमिक लेकर ओषधिकी व्यवस्था करो; लोभवश रोगीको सताओ नहीं। गरीबोंका सदा ध्यान रक्खो। तुम अपनी निःस्वार्थ सेवासे भगवान्‌के बड़े प्यारे बन सकते हो और भगवान्‌की प्राप्ति कर सकते हो।

× × × ×

तुम पुलिस अफसर हो तो अपनेको जनतारूप भगवान्‌का सेवक समझो, किसीको न गाली दो, न सताओ, लोभ, घमंड, अभिमान या द्वेषवश किसीको कभी भूलकर भी व्यर्थ तंग न करो, सेवाके भावसे ही सारे कार्य करो।

तुम अपना सुधार करके इस प्रकार भगवत्सेवामें लग जाओ तो अपने इसी पुलिसके कामसे तुम्हें भगवत्प्राप्ति हो सकती है।

× × × ×

तुम नेता या उपदेशक हो तो अपनी पूजा-प्रतिष्ठा न चाहो—सच्चे अनुभवयुक्त मार्गपर लोगोंको लगाओ, दलबंदी न करो, सम्प्रदाय न बनाओ। सबका हित हो वही कार्य अभिमान,

लोभ और मान-बड़ाईकी इच्छा छोड़कर करो—तुम्हारी इसी सेवासे भगवान् प्रसन्न होकर तुम्हें अपना पद दे देंगे।

× × × ×

तुम मालिक हो तो नौकरोंको सताओ मत, अभिमानवश अपनेको बड़ा न समझो, अपने स्वाँगके अनुसार नौकरोंसे काम लो परन्तु मन-ही-मन उन्हें भगवान्‌का स्वरूप समझकर उनके हितरूपी सेवा करनेकी चेष्टा करते रहो। मनसे किसीका तिरस्कार न करो। लोभवश किसीकी न्याय्य आजीविकाको न काटो। उनके भलेमें लगे रहो। इसीसे तुमपर भगवान् कृपा करेंगे और तुम्हें अपना परमपद प्रदान करेंगे।

× × × ×

इसी प्रकार और भी सब लोगोंको अपने-अपने कर्मोंद्वारा भगवान्‌की निष्काम पूजा करनी चाहिये।

सुखी होनेके उपाय

मनको आनन्द, प्रकाश, प्रेम, शान्ति और समतासे भर लो। चित्तकी शुद्धिका यही अर्थ है कि उसमें केवल दिव्य आनन्द, प्रकाश, प्रेम, शान्ति और समताकी पूर्णता हो, वह इन्हींसे भरा रहे। आनन्द ही प्रकाश है, प्रकाश ही सत् है, वही चेतन है, वही प्रेम और वही शान्ति है, उसीमें समता भरी है, वही सच्चिदानन्दघन है। बस, उसीसे चित्तके कोने-कोनेको भर लो। उसके सिवा सभी विचार अशुद्ध हैं, चित्तके लिये अस्पृश्य हैं।

× × × ×

मनको मौन करो। मुँहसे न बोलनेका नाम ही मौन नहीं है, मौन कहते हैं चित्तके मौन हो जानेको। चित्त जगत्‌का मनन

ही न करे, जगत्‌का कोई चित्र चित्तपटलपर रहे ही नहीं। बस, एकमात्र परमात्मामें ही चित्त रम जाय, वह उसीमें प्रविष्ट हो जाय। विश्वास करो, यह स्थिति होती है, तुम्हारी भी यत्न करनेपर हो सकती है। ऐसा ध्यान हो सकता है, ऐसी समाधि सम्भव है, जिसमें जगत्‌की तो बात ही क्या, तन-मनकी भी सुधि नहीं रहती, अधिक क्या, ध्यान करनेवाला स्वयं ध्येयमें समाकर खो जाता है। इस आनन्दका मज़ा ज़बानसे कोई नहीं बता सकता, यह अनिर्वचनीय होता है, जिसको एक बार मिल गया, वह उसे कभी छोड़ना ही नहीं चाहता। परन्तु उल्लूको प्रकाशके सुखका क्या पता? जो ध्यान करता ही नहीं, जिसका चित्त रात-दिन जगत्‌का चिन्तन किया करता है, उसे क्या पता? विश्वास करो, चेष्टा करो, आठों पहर सावधान रहकर चित्तकी वृत्तियोंसे जगत्‌के चित्रको हटाकर उनमें आनन्दरूप परमात्माका प्रवेश कराओ, वे स्वयं आनन्दमयी हो उठें।

× × × ×

स्मरण रक्खो, सब कुछ मनहीपर अवलम्बित है। तुम्हारा मन शुद्ध है तो तुम्हारे लिये जगत् शुद्ध है। तुम्हारे मनमें काम या क्रोध नहीं है, तुम्हारी मनोवृत्ति उन्हें नहीं पहचानती तो इन्द्रकी उर्वशी सोलह शृङ्गारोंसे सजकर आनेपर भी एवं तुम्हारे सामने किसीके द्वारा तुम्हारा महान् अनिष्ट हो जानेपर भी तुमपर काम या क्रोधका असर नहीं हो सकता। शरीरसे तभी पाप होते हैं जब कि पाप तुम्हारे मनमें होते हैं। छोटे बच्चेके मनमें काम नहीं होता, वह युवतियोंके वक्षःस्थलपर

खेलता है, उसके शरीरमें कोई विकार नहीं होता। पुरुष उन्हीं नेत्रोंसे माताको देखता है और उन्हींसे अपनी स्त्रीको देखता है, उसी हाथसे माताका अंग स्पर्श करता है और उसीसे स्त्रीका अंग स्पर्श करता है, परन्तु पहलेमें कोई शरीर-विकार नहीं होता और दूसरेमें काम-वासना जाग्रत् होती है। कारण क्या है—माताके दर्शन या स्पर्शके समय मनमें काम नहीं रहता और स्त्रीके दर्शन-स्पर्शमें रहता है। जो मनमें है वही बाहर आता है, क्रिया वही होती है जिसका संकल्प मनमें होता है।

× × × ×

मनको निर्विषय करो, परमात्माके सिवा अन्य विषय-चिन्तनको सर्वथा हटाओ, ऐसा न हो सके तो शुभ विषयोंका चिन्तन करो। आनन्द, सुख, ज्ञान, शान्ति, समता, परोपकार, दया, प्रेम, करुणा, अहिंसा, सेवा, दान, मैत्री, ब्रह्मचर्य, संयम आदि भावोंका संग्रह और पोषण करो। तुम्हारे मनके अनुसार तुम्हारा वातावरण बन जायगा, तुम्हें वैसा ही संग मिलेगा और उसीके अनुसार तुम्हारी क्रियाएँ होंगी। तुम्हारे मनमें द्वेष न होकर प्रेम होगा, तो उसकी झलक तुम्हारी आँखोंपर, तुम्हारे चेहरेपर और तुम्हारी वाणीमें आवेगी, तुम्हें देखते ही, तुम्हारी वाणी सुनते ही, तुम्हारी आँखोंसे आँख मिलते ही लोगोंका तुम्हारी ओर आकर्षण होगा, प्रेमझाँकी होगी। वे भी तुम्हारे प्रेमी बन जायँगे। मनमें प्रेम होगा तो तुमसे क्रिया भी प्रेमकी ही होगी, फल यह होगा कि जगत् तुम्हारा प्रेमी बन जायगा। यही बात दूसरे सद्गुणोंकी समझो। तुम्हारे मनमें जिस भावकी अनन्यता

या जिन भावोंकी प्रधानता होगी, तुमको बदलेमें भी वही भाव मिलेंगे। तुम्हारे मनमें आनन्द होगा, तुम्हें आनन्द मिलेगा; प्रेम होगा, प्रेम मिलेगा; दया होगी, दया मिलेगी—यही बात सबमें समझो। स्मरण रक्खो, तुम्हारे मनका पूर्ण प्रेम, तुम्हारे मनकी पूर्ण शान्ति तुम्हारे शरीर, नेत्र और वाणीमें प्रकट होकर जगत्को प्रेम और शान्तिका दान दे सकती है। तुम्हारे दर्शन, स्पर्श और भाषणसे लोग प्रेम और शान्तिको पा सकते हैं। श्रीचैतन्यके स्पर्शमात्रसे लोग प्रेमी बन गये। उनके दर्शन, कीर्तन, श्रवणसे हिंसक जन्तु प्रेममत्त हो नाचने लगे। काकभुशुण्डिजीके आश्रमके इर्द-गिर्द चार-चार कोसमें आसुरी सम्पत्ति नहीं घुसने पाती थी। तुम भी ऐसे ही बन सकते हो।

× × × ×

इसी प्रकार यदि तुम्हारे हृदयमें अज्ञान, द्वेष, दुःख, विषाद, शोक, स्वार्थ, विषमता, अशान्ति, काम, क्रोध, लोभ, वैर, हिंसा आदि होंगे तो तुम्हारा वैसा ही वातावरण हो जायगा, वैसा ही संग होगा और वैसी ही क्रिया होगी। फलतः तुम वैसे ही बन जाओगे। अपनेसे मिलनेवालोंको और जगत्को भी तुम यही चीजें दोगे। अच्छे-बुरे भाव सिर्फ एक बार मनमें उदय होकर सुख-दुःख दे जाते हैं, इतना ही नहीं है, वे अपना संस्कार-बीज छोड़ जाते हैं जो अनुकूल वातावरण पाकर ही बार-बार अंकुरित और फलित होते हैं। आज तुमने किसीसे द्वेष किया, उसका चित्र संस्कार-बीजरूपसे तुम्हारे मनपर अंकित हो गया, तुम द्वेषको पहचान गये, मौका पाकर वह फिर उदय होगा और तुम्हें दुःख देगा। यही बात अच्छे भावोंके लिये है।

अतएव बुरे भावोंका सञ्चय और पोषण कभी न करो, मनमें इनको आने ही न दो। यह नरकाग्नि है जो तुम्हें जलाती है और जलाती रहेगी। यह नये-नये पाप करवायगी और उनका तार सहजमें टूटना कठिन हो जायगा। तुम्हें वार-वार नारकी योनियोंमें जा-जाकर असह्य यन्त्रणाएँ भोगनी पड़ेंगी, तव भी सहजमें छुटकारा नहीं मिलेगा।

× × × ×

मनमें सद्भावनाओंको भरे रक्खो, सवका भला चाहो, सवका कल्याण चाहो, सवमें परमात्माकी भक्ति फैलने, सवमें सात्त्विक भाव वढ़ने और सवमें प्रेमविस्तार होनेकी भावना करो। विश्वास करो, तुम्हारे दृढ़ भावसे, तुम्हारी प्रवल शुद्ध इच्छा-शक्तिसे तुम्हारी भावनाएँ, तुम्हारे संकल्प सत्य हो सकते हैं; तुम अपनी सद्भावनासे अनेकों दुखियों, रोगियों, अज्ञानियों और पापियोंको दुःखमुक्त, रोगमुक्त, अज्ञानमुक्त और पापमुक्त कर उन्हें सुखी वना सकते हो।

× × × ×

विश्वास करो, तुम अपनी सद्भावनाओंसे, सत् विचारोंसे, सात्त्विक संकल्पोंसे अपने आसपास ही नहीं—सारे भूमण्डलपर सद्भावना, सद्विचार और सात्त्विक संकल्पोंका विस्तार कर सकते हो। स्वयं परम सुखी हो सकते हो और जगत्के लोगोंको सुखी वना सकते हो।

× × × ×

इतना विस्तार अभी न हो तो कम-से-कम तुम स्वयं तो सुखी हो ही सकते हो, यह तुम्हारे हाथकी बात है। तामसी-राजसी कुविचारों और कुसंकल्पोंको पाल-पालकर उनका पोषण कर-कर तुम दुःखमय और पापमय बन सकते हो, तथा उनको हटाकर सात्त्विक विचारों और सत्संकल्पोंको हृदयमें रखकर उन्हें भलीभाँति सञ्चितकर पाल-पोसकर तुम आनन्दमय और पुण्यमय बन सकते हो। याद रक्खो, सत्संकल्प ही स्वर्ग है और व्यर्थ संकल्प तथा पापसंकल्प ही नरक है। सत्संकल्प और सद्विचार ही अमृत है और व्यर्थ तथा बुरे संकल्प और व्यर्थ तथा बुरे विचार ही मृत्यु है, अतिमृत्यु है।

× × × ×

तुम यदि सत्संकल्पोंके कारण चित्तकी वृत्तियोंको आनन्दमय, पुण्यमय, प्रकाशमय, शान्तिमय और समतामय बना सके तो विश्वास करो, तुम भगवान्‌के अत्यन्त समीप पहुँच गये। तुम्हारा मनुष्यजीवन सफल हो गया। यह तुम्हारे हाथकी बात है। सोचो, विचार करो और दृढ़ताके साथ मनको सद्विचारोंसे भरनेके प्रयत्नमें प्राणपनसे लग जाओ।

अभावकी पूर्ति

मनुष्य किसी एक वस्तुका अभाव समझकर उसे प्राप्त करनेकी चेष्टा करता है, वह प्राप्त हो भी जाती है और नहीं भी। प्राप्त हो जाती है तो क्षणभरके लिये दूसरी वस्तुके अभावका अनुभव न होनेतक मनमें हर्ष होता है, नहीं प्राप्त होती तो शोक रहता है। प्राप्त होकर नष्ट हो जाती है तो शोक और भी बढ़ जाता है और चाहकी चिन्ता-चिता तो निरन्तर चित्तमें धधकती ही रहती है।

× × × ×

किसी एक वस्तुके अभावको मिटानेके लिये जो उपाय किये जाते हैं, उनके करनेमें भी बीच-बीचमें ग्रहोंकी महादशामें अन्तर्दशाकी भाँति नये-नये अभाव पैदा होते रहते हैं, जिनकी पूर्ति-अपूर्तिका हर्ष-शोक भी चलता ही रहता है। दुःख किसी हालतमें भी नहीं मिटता और जबतक अभावोंकी उत्पत्ति होती रहेगी मिटेगा भी नहीं।

× × × ×

यही मनुष्यकी मूर्खता है कि वह एक-एक अभावकी पूर्ति करनेमें लगा रहता है और नये-नये अभावोंको उत्पन्न करता रहता है, जिससे उसके हृदयकी आग किसी भी हालतमें कभी बुझती ही नहीं। जलते-जलते ही—हाय-हाय करते-करते ही—जीवन बीत जाता है।

× × × ×

यदि वह ऐसी स्थितिको प्राप्त कर ले जिसमें कभी किसी अभावका अनुभव ही न हो, किसी अभावको पूर्ण करनेकी कभी चाह ही न हो तो सारा बखेड़ा अपने-आप मिट जायगा। 'चाह गयी, चिन्ता गयी मनुवाँ बेपरवाह।' इसीलिये प्रह्लादने भगवान्से यह वर माँगा था कि मेरे मनमें कभी माँगनेकी इच्छा हो न उत्पन्न हो।

× × × ×

अभावोंकी पूर्ति करके कोई भी अभावोंको सर्वथा पूर्ण नहीं कर सकता, क्योंकि अभावोंकी पूर्तिके साथ-ही-साथ रक्तबीजके

रक्त-विन्दुओंसे वने असुरोंकी भाँति नये-नये अभावोंकी सृष्टिका क्रम कभी बन्द नहीं होता। 'बुझै न काम-अगिन तुलसी कहुँ विषय-भोग वहु घीते।' इसलिये अभावकी उत्पत्तिका स्रोत ही बन्द कर देना चाहिये। कामना उत्पन्न ही न होगी तो आगेके सारे प्रपञ्च और पाप आप ही नष्ट हो जायँगे।

× × × ×

अतएव अभावकी पूर्तिके पचड़ेमें न पड़कर अभावका ही अभाव कर डालो। सारे अभावोंका अभाव होता है उस वस्तुको पानेसे जो नित्य है, पूर्ण है, एकरस है, सर्वगत है, अचल है, सनातन है, ज्ञानस्वरूप है, सबका आदि, मध्य और अन्त है, सर्वगुणाधार है और सर्वैश्वर्यमय है। ऐसी वस्तु एक भगवान् है। महामहिम भगवान्के महत्त्वको जान लेनेपर तो कोई ऐसा नहीं होगा जो भगवान्के सिवा और किसी ओर नजर भी डाले। हम भगवान्को न जाननेके कारण ही उस समस्त अभावोंके बीजका बीजनाश कर देनेवाले, नित्य परमसुहृद्, परमधनसे वञ्चित होकर नाना प्रकारके दुःख भोग रहे हैं।

सद्व्यवहार

इस बातका मनमें निश्चय करो कि शरीरके नाशसे तुम्हारी मृत्यु नहीं होती, तुम शरीर नहीं हो, इस शरीरके पहले भी तुम थे और पीछे भी रहोगे। तुम आत्मा हो, तुम्हारा स्वरूप नित्य है। जो वस्तु नित्य होती है वही सर्वगत, अचल, स्थिर और सनातन होती है। इस नित्य सनातन, सर्वव्यापी स्वरूपमें न जन्म है, न मरण है; न विषमता है, न विषाद है; न राग है, न रोग है; न दोष है, न द्वेष है; न विकार है, न विनाश है। यह सत् है, चेतन है और आनन्दमय है।

× × × ×

यही आनन्दमय सत्-चेतन-स्वरूप आत्मा सर्वगत है; संसारमें जितने जीव हैं सबमें यही निर्दोष और सम आत्मा स्थित है। इसलिये जिसकी दृष्टि इस आत्माकी ओर होगी, वह न किसीसे घृणा करेगा, न द्वेष; वह सबमें समान भावसे अपने आत्मस्वरूपको देखकर सबके प्रति आत्मवत् व्यवहार करेगा।

× × × ×

आत्मवत् व्यवहारमें—अपने ही शरीरके दायें-बायें और ऊपर-नीचेके अंगोंके साथ और उनके द्वारा होनेवाले व्यवहारकी भाँति—क्रियामें भेद रहेगा। क्योंकि बाह्य व्यवहार सारे-के-सारे प्रकृतिमें हैं, और प्रकृतिमें भेद है ही। इस प्रकृतिभेदके कारण ही समस्त संसारमें विषमता नजर आ रही है। न सबका वर्ण एक-सा है, न बुद्धि एक-सी है, न ढाँचा एक-सा है, न शरीरकी ताकत एक-सी है, न चेहरा एक-सा है; कुछ-न-कुछ भेद अवश्य है। इस भेदमय संसारमें अभेद देखना ही तो आत्मबुद्धि है—शुद्ध ज्ञान है। ये सारे भेद विनाशी हैं, और वह अभेद अविनाशी है। अतएव जितने जीव सब अलग-अलग भिन्न-भिन्न रूपोंमें दीख पड़ते हैं, उन सबमें एक विभागरहित नित्य अविनाशी आत्माको देखो। और ऐसा देखते हुए ही यथायोग्य बर्ताव करो। तुम्हारे सब बर्ताव अन्दरसे सर्वथा निर्दोष हो जायँगे।

× × × ×

एक ही विशाल वृक्षके बहुत-सी डालियाँ हैं, लाखों पत्ते हैं और हजारों फूल तथा फल लगे हैं। डालियों और पत्तोंकी अलग-

अलग आवश्यकता भी है और सार्थकता भी; क्योंकि फूल तथा फल इन्हींसे मिलते हैं। निरे ठूँठसे फल-फूल नहीं मिलते। परन्तु कोई भी बुद्धिमान् पुरुष डालियों और पत्तोंके लिये ठूँठकी जड़को नहीं काटता, जड़ ही कट गयी तो डाली-पत्ते और फूल-फल फलेंगे ही किसके आधारपर? पर केवल जड़की रक्षा करके डाली-पत्तोंको काटनेसे भी काम नहीं चलेगा। इसी प्रकार मूलवृक्ष आत्मा, और उसके डाली-पत्ते-स्वरूप विभिन्न बाह्य अंग हैं। अतएव न तो सर्वगत, एकरस, निर्दोष और सम आत्मामें भेदकी कल्पना करो, और न बाहरके व्यवहारमें विभिन्नता देखकर इस विभिन्नताको नाश करनेकी व्यर्थ चेष्टा करो। विभिन्नतामें ही फल है और इसीमें सौन्दर्य है। प्रकृतिका महान् सौन्दर्य हम वृक्षके चित्र-विचित्र शाखा-पत्र और रंग-विरंगे मनमोहक पुष्प तथा रसीले स्वादु फलोंमें ही देख पाते हैं। इस रंग-विरंगी रसीली व्यावहारिक सृष्टिको मिटाकर, विविध विचित्रताओं और नाना रंगोंसे रहित सदा एकरस और एकरंग आत्माकी उपलब्धि सहज नहीं है। इस विचित्रता और अनेकतामें ही उस नित्य एकरसत्व और एकत्वका अनुभव करो—व्यावहारिक अनित्य भेदमें ही पारमार्थिक नित्य अभेदके दर्शन करो।

× × × ×

सर्वगत एकरस निर्दोष अभेदमय आत्माको देखते हुए ही भेदमय व्यवहार करो। व्यवहारका भेद तुम्हारे मिटाये मिट नहीं सकता और आत्मामें तुम अभेद उत्पन्न कर नहीं सकते। अतएव व्यवहारमें आवश्यक भेद रक्खो—परन्तु आत्मदृष्टि रखते हुए ही; कहीं आत्माको भूलकर शरीर और शरीरसम्बन्धी भेदोंको ही

अपना असली स्वरूप मान लोगे तो राग-द्वेष और अपने-परायेके अज्ञान और पापमय झगड़ेमें पड़कर पतित हो जाओगे। तुम भारतवासी हो, हिन्दू हो, सनातनी हो, युक्तप्रान्तके हो, ब्राह्मण हो, गृहस्थ हो, पण्डित हो, परन्तु इन सबके पहले 'आत्मा' हो—इन सभी परवर्ती स्वरूपोंकी पूरी रक्षा करो—सब मर्यादाओंका पालन करो, परन्तु वैसे ही जैसे नाटकका पात्र नाट्य-मञ्च (स्टेज) पर अपने स्वाँगके अनुसार ही खेल खेलता है लेकिन अपने निजस्वरूपको कभी नहीं भूलता। ये सब केवल तुम्हारे इसी शरीरके स्वाँग हैं, आत्मा तुम्हारा यथार्थ नित्य निजरूप है। तुम मरनेपर यूरोपमें जन्म ले सकते हो, अहिन्दू हो सकते हो, परन्तु आत्मासे अनात्मा नहीं हो सकते। अवश्य ही नाटकके उसी पात्रकी उन्नति होती है, और वही खेलमें ऊँचे स्वाँगको पाता है, जो अपने स्वाँगके खेलको उसीके अनुसार ठीक-ठिकानेसे निबाहता है; दूसरेकी क्रिया भूलकर भी नहीं करना चाहता। यही वर्णाश्रमका रहस्य है। प्रत्येक उन्नतिकामी व्यक्तिको वर्णाश्रमकी इस मर्यादाका अवश्य पालन करना चाहिये। परन्तु इसीको असली रूप मानकर दूसरे स्वाँगोंसे—दूसरे देश, जाति, धर्म, प्रान्त, वर्ण, आश्रम और आजीविकाके कार्योंसे कभी न घृणा करो, न उन्हें अपनेसे नीचा समझो। अपने-अपने स्वरूपमें सभीकी आवश्यकता और सार्थकता है, और सभी बड़े हैं। जैसे नीचा समझकर दूसरे किसीसे भी घृणा न करो, वैसे ही ऊँचा समझकर दूसरे किसीकी नकल या चाह भी न करो। एक ही नित्य अविनाशी सत् चेतन आनन्दमय आत्मामें यह प्रकृतिके विविध खेल हो रहे हैं! यही

समझकर और इसीकी ओर दृष्टि रखकर नित्य आत्माका ध्यान करते हुए ही शरीरसे यथायोग्य व्यवहार करो।

× × × ×

यह आत्मा परमात्माका ही सनातन अभिन्न अंश है, परमात्माका ही स्वरूप है। परन्तु जबतक इसकी स्थिति प्रकृतिमें है, तबतक यह जीवात्मा कहलाता है और तबतक इसे प्रकृतिजन्य गुणोंको भोगना तथा गुणोंके संगसे अच्छी-बुरी योनियोंमें जाना पड़ता है। असंग, अक्रिय, नित्य, आनन्दमय होनेपर भी इसे प्रकृतिस्थित होनेसे सुख-दुःखका भोग करना पड़ता है। इस प्रकृतिमेंसे 'अहं' को निकालकर उसे सत् और आनन्दमय सर्वगत अविनाशी एक आत्मामें स्थापित करो, और प्रकृतिजन्य गुणोंके फंदेसे छूटकर सुख-दुःखसे अतीत अनामय आनन्दमय ब्राह्मी स्थितिको प्राप्त हो जाओ।

× × × ×

यह स्मरण रक्खो कि देहमें स्थित होनेसे जो सुख-दुःखभोगी जीवात्मा कहलाता है वही साक्षीरूपसे द्रष्टा, अन्दरसे सच्ची आवाज देनेवाला होनेसे अनुमन्ता, धारण-पोषण करनेवाला होनेसे भर्ता, नियामकरूपमें ईश्वर और निर्गुणरूपमें परमात्मा है। यह सभी स्वरूप एक ही कालमें एक ही भगवान्‌में हैं, सिर्फ कार्यभिन्नतासे स्वरूपभिन्नता है। यही उनकी अनिर्वचनीय लीला है।

× × × ×

इसी समग्र परमात्माके मुख्यतः दो नित्यस्वरूप हैं—एक अव्यक्त, दूसरा व्यक्त। अव्यक्तमें दो भेद हैं एक अव्यक्त निर्गुण और दूसरा अव्यक्त सगुण। अव्यक्त निर्गुण उस स्थितिका नाम

है जिसमें शक्तिकी लीला बन्द है; शक्ति शक्तिमान्‌में विलीन है। इसीको विज्ञानानन्दघन ब्रह्म कहते हैं। अव्यक्त सगुण ही—सृष्टि-कर्ता, सर्वव्यापी, सबका नियामक और विभु है, आत्मा, जीवात्मा, द्रष्टा, अनुमन्ता, भर्ता, भोक्ता, इसीके स्थिति-भेद हैं। शक्तिकी क्रिया होनेकी स्थितिमें ही—यह सगुण कहलाता है। वही परमात्मा नित्य दिव्य विग्रहरूपमें व्यक्त है—इसीके श्रीराम-कृष्णादि अवतार-रूप विष्णु, शिव, देवी, ब्रह्मा, सूर्य आदि दिव्य स्वरूप हैं। इन सब स्वरूपोंको कदापि स्वरूपतः और तत्त्वतः अलग-अलग मत मानो। एकके ही अनेक अव्यक्त और व्यक्त लीला-वपु हैं। अपने इष्टरूपके अनन्य भक्त रहो। शेष सब रूपोंको या तो उसीमें विलीन करके सर्वत्र सर्वदा सर्वथा एक उसीको देखो सुनो। विलीन न कर सको तो सब रूपोंको अपने उस एक ही लीलामय इष्टदेवके विभिन्न स्वरूप समझो। यह निश्चय रक्खो—सर्वमय, सर्वशक्तिमान्, सर्वाधार, सर्वव्यापी, सर्वरूप भगवान्‌के किसी भी व्यक्त साकार रूपकी एकमात्र महेश्वरबुद्धिसे परम श्रद्धायुक्त होकर अनन्य उपासना करनेवाला भक्त, और नित्य निर्गुण विज्ञानानन्द-घन परमात्माकी अभेदोपासना करनेवाला ज्ञानी दोनों अन्तमें एक ही भगवत्तत्त्वको प्राप्त होंगे। क्योंकि परमात्मा एक ही है। अवश्य ही लीलामय साकाररूपका अनन्य उपासक श्रेष्ठ योगवेत्ता पुरुष प्रेमके अलभ्य रसको विशेषरूपसे उपलब्ध करेगा।

× × × ×

भगवान्‌के नित्यविग्रह श्रीराम, श्रीकृष्ण आदि स्वरूपोंको कभी जन्मने और मरनेवाला समझकर इनकी अवहेलना न करो।

इनका प्रादुर्भाव और तिरोभाव अथवा प्राकट्य और अन्तर्धान होता है, न कि जन्म-मरण। जो लोग इनके अज, अविनाशी, महेश्वररूप परम पुरुषोत्तम भावको न जानकर इन्हें जन्मने-मरनेवाले मनुष्य समझते हैं, उनकी बातोंपर विश्वास कभी न करो। और परम श्रद्धाके साथ इन दिव्य स्वरूपोंका अपनी-अपनी रुचिके अनुसार ध्यान-भजन करते रहो। यह भगवान्‌की योगमाया-का बड़ा प्रभाव है। योगमायाका पर्दा डालकर प्रकट होनेके कारण ही तो हम मूढ़लोग अज और अविनाशी भगवान्‌को न पहचानकर श्रीराम-कृष्णरूपको मायाबद्ध मानवरूप कहते हैं। याद रक्खो—भगवान्‌की दुरत्यय मायासे वही पुरुष बचकर पार जा सकता है जो मायाके अधिपति भगवान्‌के शरण हो जाता है। अतएव भगवान्‌के अव्यक्त और व्यक्त, निर्गुण-सगुण रूपोंमें भेदभाव न कर, विवादको छोड़कर, तर्कको तिलाञ्जलि देकर केवल प्रेमपूर्वक भजन ही करो।

× × × ×

चाहे अव्यक्तको भजो या व्यक्तको, प्राणिमात्रके साथ सद्-व्यवहारकी दोनोंमें ही जरूरत है। अव्यक्तमें सब ब्रह्ममय है, और व्यक्तमें श्रीकृष्णमय या श्रीराममय! बात एक ही है। चाहे सबको ब्रह्म समझकर अपनेको भी उनसे अभिन्न मानकर अनिवार्य व्यावहारिक भेदको रखते हुए ही अभेद व्यवहार करो। चाहे सबको श्रीरामस्वरूप मानकर श्रीरामके दिये हुए अपने स्वाँगके अनुसार सबकी यथायोग्य सेवा करो। याद रक्खो—सेवा स्वकर्मसे ही अच्छी प्रकार हो सकेगी! यह आदर्श साधकोंके लिये है। सिद्धोंकी बात तो सिद्ध ही जानते हैं।

सेवा

सेवा करना परम धर्म समझकर यथायोग्य तन-मन-धनसे सबकी सेवा करो, परन्तु मनमें कभी इस अभिमानको न उत्पन्न होने दो कि मैंने किसीकी सेवा या उपकार किया है। उसे जो कुछ मिला है सो उसके भाग्यसे, उसके कर्मफलके रूपमें मिला है, तुम तो निमित्तमात्र हो। दूसरेको सुख पहुँचानेमें निमित्त बनाये गये, इसको ईश्वरकी कृपा समझो और जिसने तुम्हारी सेवा स्वीकार की, उसके प्रति मनमें कृतज्ञ होओ।

× × × ×

सेवा करके अहसान करना, सेवाके बदलेमें सेवा चाहना, अन्य किसी भी फल-कामनाकी पूर्ति चाहना तो प्रत्यक्ष ही सेवाधर्मसे

च्युत होना है। मनमें इस इच्छाकी लहरको भी मत आने दो कि उसे मेरी की हुई सेवाका पता रहना चाहिये। सेवाके बदलेमें मान चाहना या बड़ाई और प्रतिष्ठाकी चाह करना तो मानके चाहकी चञ्चल लहर नहीं है, बहुत मोटी धारा है। यहाँ मनुष्य बहुधा भूल कर बैठता है। जब वह किसी व्यक्ति (किसी जीव) या समष्टि (देश-जाति) की कुछ सेवा करता है, उस समय तो सम्भवतः सेवाके भावसे ही करता है परन्तु पीछेसे यदि उस सेवाके बदलेमें उसे कुछ भी नहीं मिलता अथवा उस मनुष्य या देशके द्वारा, जिसकी उसने सेवा की थी, किसी दूसरेको सम्मान मिलता है तो उसे दुःख-सा होता है, यह इसीलिये होता है कि उसने मन-ही-मन उनके द्वारा सम्मानित होनेका अपना स्वत्व या हक समझ लिया था। दूसरेके सम्मानमें उसे अपना हक छिनता-सा नजर आता है। वास्तवमें यह एक प्रकारसे सेवाका मूल्य घटाना है। अतएव यह कभी मत चाहो कि मुझे कोई पुरस्कार या सम्मान मिले, न दूसरेको मान मिलता देखकर डाह करो। तुम तो अपना केवल सेवाका ही अधिकार समझो।

× × × ×

कर्म या उसके फलमें आसक्त मत होओ; न ममता करो; और न विफलतामें विषाद करो। तुमने किसीकी सेवा की, और वह तुम्हारा उपकार न माने तो उसपर नाराज मत होओ, बल्कि अपनी सेवाको भूल जाओ। याद ही रहे तो पता लगाओ, कहीं उसमें दोष रहा होगा। सेवा करके तुमने गिनाया होगा, उसपर अहसान किया होगा, कुछ बदला चाहा होगा। जिस व्यक्ति या

देशकी सेवा करते हो, उसका वह काम हो जानेपर उसमें अपना कोई अधिकार मत समझो। उस हालतमें अपनेको बहुत ही भाग्यवान् समझो जब कि तुम्हारी सेवाका बदला देनेके लिये, तुम्हारे सामने होते हुए भी तुम्हें कोई खोजकर न निकाल सके और वह बदला दूसरेको मिल जाय, और तुम उसमें मदद करो।

× × × ×

सेवा या सत्कार्यके बदलेमें मरनेके बाद भी कीर्ति न चाहो। तुम्हें लोग भूल जायँ इसीमें अपना कल्याण समझो। काम अच्छा तुम करो, कीर्ति दूसरोंको लेने दो। बुरा काम भूलकर भी न करो, परन्तु तुमपर उसका आरोप लगकर दूसरा उससे मुक्त होता हो तो उसे सर चढ़ा लो। तुम्हारा कुछ नहीं बिगड़ेगा। तुम्हारा वह सुखदायी मनचाहा अपमान तुम्हारे लिये मुक्तिका और आत्यन्तिक सुखका दरवाजा खोल देगा।

× × × ×

सेवा करके नेता, गुरु, अध्यक्ष, सञ्चालक, पथप्रदर्शक, राजा, शासक और सम्मान्य बननेकी कभी मनमें भावना ही मत आने दो; जो पहलेसे ही सम्मान और ऊँचा पद प्राप्त करनेके लिये किसीकी सेवा करना चाहते हैं, वे यथार्थ सेवा नहीं कर पाते; उनकी अपने साथियोंसे प्रतिद्वन्द्विता हो जाती है और सेवा करनेकी शक्ति प्रतिद्वन्द्वीको परास्त करनेमें खर्च होने लगती है। राग-द्वेष तो बढ़ता ही है। सेवा करनेपर मनचाही चीज़ नहीं मिलती तब दुःख होता है। इसके सिवा एक बात यह है कि जो

ऊँचा बननेके उद्देश्यसे ही नीचा बनकर कार्य करता है वह वास्तवमें नीचा बननेका—आज्ञा मानने या सेवा करनेका बहाना ही करता है, वह तो वास्तवमें दूसरोंको नीचा, आज्ञाकारी और सेवक बनानेकी नीयत रखता है। जिसकी नीयत ही ऐसी है वह सेवा क्या कर सकता है? अतएव सदा सबके सेवक बननेकी ही अभिलाषा रक्खो, स्वामी बननेकी नहीं। कोई ऊँचा बनावे तो उसे स्वीकार न करो। खयाल रहे, बहुधा ऊँचे मानका अस्वीकार भी बड़ाईके लिये ही किया जाता है। बड़ाईके मोहमें भी मत फँसो। मान-बड़ाईका त्याग करो, और फिर इस त्यागकी स्मृतिका भी त्याग कर दो।

× × × ×

तुम्हारे द्वारा किसीकी कुछ भलाई हो जाय तो यह मत समझो कि यह भलाई मैंने की है। उसकी भलाई भगवान्‌ने की है और उसमें उसका अपना पूर्वकृत कर्म कारण है। तुम्हारी दृष्टि बहुत दूरतक नहीं जा सकती। सम्भव है तुम जिसमें किसीकी भलाई समझते हो, उससे परिणाममें उसका अहित हो जाय। तुम्हारी बुद्धि परिमित है, तुम्हारा विचार सर्वथा निर्भ्रान्त नहीं है। सद्‌विचारके लिये परमात्मासे प्रार्थना करो, और परमात्माकी सत्ता, स्फूर्ति और प्रेरणा समझकर ही किसीके उपकारका कार्य करो। याद रक्खो, तुम्हारी बाह्य चेष्टाओंकी अपेक्षा ईश्वरप्रार्थनासे बहुत अधिक और निश्चित फल होगा। तुम्हारी चेष्टा तो तुम्हारी अदूरदर्शिताके कारण विपरीत फल भी उत्पन्न कर सकती है परन्तु भगवान्‌की प्रार्थनासे तो विपरीत फल होता ही नहीं।

× × × ×

सेवा करनेके अभिमानमें ईश्वरकी भूल मिटानेका दम मत भरो। बहुत-से लोग ईश्वरके किये हुए विधानको पलटनेकी व्यर्थ कोशिश करके ईश्वरको निर्दयी, अशक्त या असत् सिद्ध करना चाहते हैं और अपने बलकी स्थापना करना चाहते हैं, यह उनकी बड़ी भूल है। ईश्वरके प्रत्येक विधानको न्याय और दयासे युक्त समझो। ईश्वर किसीको व्यर्थ कष्ट नहीं देता, वह जीवके कर्मका फल ही उसे सुख-दुःखके रूपमें भुगताता है। और उसमें भी उसकी दया रहती है। उसके विधानको मिटानेकी चेष्टा न करो। हाँ, कष्टमें पड़े हुए प्राणीका कष्ट दूर करनेकी चेष्टा अवश्य करो। इससे ईश्वर तुमपर वैसे ही प्रसन्न होगा, जैसे स्नेहमयी माता अपने बच्चेको स्वयं दण्ड देती है और उसके रोने लगनेपर उसका रोना बन्द कराके खुशीसे हँसा देनेवालेपर बड़ी प्रसन्न होती है।

× × × ×

ईश्वरको दयालु और सर्वशक्तिमान् समझो। और उसके अस्तित्वमें कभी सन्देह न करो। जगत्का अस्तित्व ही उसके अस्तित्वको सिद्ध करता है। जगत्को स्वीकार करना और भगवान्‌को अस्वीकार करना वैसा ही है जैसा सोनेके गहनेको स्वीकार करते हुए सोनेको अस्वीकार करना!

× × × ×

सर्वत्र सर्वदा ईश्वरकी सत्ता देखकर जगत्का व्यवहार करो, प्रत्येक सृजन और संहारमें उसके मंगलमय हाथोंके दर्शन करो, प्रत्येक रुदन और गायनमें उसके मधुर कण्ठस्वरका अनुभव करो,

प्रत्येक दुःख और सुखमें उसके कोमल शरीरका स्पर्श करो, प्रत्येक रूपान्तर और कालान्तरमें उसके मुस्कराते हुए मुखड़ेको देखो, प्रत्येक गति और चञ्चलतामें उसके अरुण चरणोंकी नूपुर-ध्वनि सुनो, और प्रत्येक प्रवाहमें उसकी स्थिरा अचला प्रकाशमयी नित्या सनातनी सच्चिदानन्दमयी सर्वव्यापिनी रसमयी मूर्तिकी पूजा करो ! तुम धन्य हो जाओगे !



सफल जीवन

जबतक संसारके भोगोंकी चाह है तबतक मनुष्य कभी सुखी नहीं हो सकता। जितनी चाह बढ़ती है उतना ही दुःखोंका विस्तार होता है परन्तु ज्यों-ज्यों चाह पूरी होती है त्यों-त्यों चाह बढ़ती है।

× × × ×

दुःखोंसे छूटना हो तो चाह छोड़ो, दुःखोंको कम करना हो तो चाह कम करो और चाह कम करनी हो तो चाहको पूरा करनेकी इच्छाका त्याग कर दो। चाहरूपी आगमें विषयरूपी घीकी आहुति मत दो, उसपर सन्तोषका शीतल जल छोड़कर उसे बिल्कुल बुझा दो।

× × × ×

विषय-सुखसे निराश होना सच्चे सुखकी प्राप्तिकी ओर बढ़ना है, विषयोंकी चिन्ता छूटे बिना सच्चे सुखका चिन्तन नहीं हो सकता, वे पुरुष वास्तवमें भाग्यवान् हैं जो विषय-सुखसे वञ्चित हैं।

× × × ×

जिसके सांसारिक विषय जितने अधिक होते हैं वह प्रायः भगवान्से उतना ही अधिक दूर रहता है, विषयी पुरुषका वातावरण ही ऐसा बन जाता है कि उसके मनमें भगवान्की ओर झुकनेकी अभिलाषा सहजमें उत्पन्न नहीं होती। भगवत्-प्राप्तिकी अभिलाषा सत्संग और सद्ग्रन्थोंके द्वारा भगवान्का प्रभाव जाननेसे पैदा होती है। विषयी पुरुषोंको न तो सत्संगका अवसर मिलता है और न सद्ग्रन्थोंके पढ़ने-सुननेके लिये ही फुरसत मिलती है।

× × × ×

उदाहरण देखना हो तो अधिकांश राजाओं, अफसरों, धनियों और अमीरोंकी दशा देख लो। यदि इनमेंसे आप कोई हों तो अपने हृदयपर हाथ रखकर सोचो। यश कमाना, लोगोंपर प्रभाव बनाये रखना, मौज-शौक करना, खुशामदियोंसे घिरे रहना, चापलूस और चन्दा माँगनेवालोंसे तंग रहना, महल-मकान बनवाना, सैर-सपाटा करना, नाटक-सीनेमा देखना, विनोद करना, पर-निन्दा और परचर्चाको कहना-सुनना, भोग-वासना पूर्ण करना, विरोधियोंको दबाना, समान सम्मान और कीर्तिवालोंको नीचा दिखाना आदि कितने ही परम आवश्यक प्रतीत होनेवाले प्रपञ्च पीछे लगे रहते हैं। सुबह उठनेसे लेकर रातको सोनेतक किसी

समय भगवन्नामस्मरण और सद्ग्रन्थके अध्ययनकी कल्पना ही मन-में नहीं आती ।

× × × ×

यथार्थ सन्त-महात्मा लोभहीन होनेके कारण ऐसे लोगोंके दरवाजेपर जाते नहीं । कोई स्वाभाविक दयावश चला भी जाय तो ऐसे लोग उसे किसी कामनासे आया हुआ समझकर उससे लाभ नहीं उठाते, कोई-कोई तो तिरस्कारतक कर बैठते हैं । और स्वयं किसी सन्त-महात्माके पास जाते नहीं, प्रथम तो सन्त-महात्मा-सम्बन्धी चर्चा ही उनके कानोंतक नहीं पहुँचने पातीं, यदि कहीं चर्चा होती है तो उनपर अपने मान, कल्पित स्वरूप अथवा पोजीशनका ऐसा भूत सवार रहता है जो मान-भंगका भय दिखलाकर उन्हें, अमीर-गरीबमें समानभाव रखनेवाले और सबके साथ प्रेमसे मिलनेवाले महात्माओंके पास जाने नहीं देता ।

× × × ×

परन्तु यह बात नहीं है कि सभी ऐसे ही होते हों । खूब धन-दौलत, मान-सम्मान और पद-मर्यादामें रहते हुए भी भगवान्की ओर चित्त लगानेवाले पुरुष सदासे होते आये हैं और अब भी हैं पर उनकी संख्या बहुत ही थोड़ी होती है, और पूर्वजन्मके विशेष साधनके बलसे ही वे प्रतिकूल वायुमण्डलमें रहकर अपनी स्थितिको सम्हाले रहते हैं और लक्ष्यको नहीं भूलते ।

× × × ×

सच्चा सुख भगवान् अथवा भगवान्के अनन्य प्रेमकी प्राप्तिमें

ही है, और वह तभी प्राप्त हो सकता है जब मनुष्यका जीवन उस सुखकी ओर ले जानेवाले साधनोंसे भर जाय। वे साधन विषयप्रेमसे सर्वथा विरोधी होते हैं। इसीलिये संतों और अनुभवी महात्माओंने विषयोंको विषवत् छोड़ देनेकी सलाह दी है। जो मनुष्य विषयोंसे चिपटा रहकर विषय-भोगको सुख-प्राप्तिका साधन समझकर उनमें रचा-पचा रहता है और अपनेको भगवत्-प्राप्तिका अभिलाषी भी बतलाता है, वह या तो धोखेमें है या जान-बूझकर दम्भ करता है। जबतक मनुष्य अकिञ्चन नहीं बन जाता तबतक भगवान्‌को पानेका अधिकारी नहीं होता। अकिञ्चनता वस्तुतः मानसिक ही होती है परन्तु जो आसक्तिवश बाहरका ही त्याग नहीं कर सकता उसके लिये मानसिक अकिञ्चनता तो बहुत दूरकी बात है। त्यागका अभ्यास दोनों प्रकारसे करना चाहिये, बाहरसे भी और भीतरसे भी। जो लोग भोगोंको तुच्छ कहकर उन्हें आसक्तिपूर्वक भोगते हुए ही ब्रह्मज्ञानी बननेका दावा करते हैं वे भी धोखा खाते हैं, और जो बाहरसे भोगोंका त्यागकर मनसे उन्हें निकाल देनेकी जरूरत ही नहीं समझते वे भी भ्रममें ही हैं।

× × × ×

जहाँतक बने, विषयोंका संग्रह न करो, विषयोंका चिन्तन न करो, विषयी पुरुषोंका संग न करो, विषयासक्ति बढ़ानेवाले दृश्य न देखो, बात न सुनो और इस तरहके ग्रन्थ न पढ़ो। मानका, धनका, रूपका लोभ उत्पन्न होता हो ऐसे हर एक संगसे भरसक

दूर रहो। लोकमें मान न हुआ, धन न बढ़ा तो इससे तुम्हारी कोई हानि नहीं होती। यदि संसारके सारे सुखोंसे वञ्चित रहकर भी, संसारके दुःख और कष्टोंसे सर्वथा पीड़ित रहकर भी तुम अपने जीवनको भगवान्‌की ओर लगाये रख सके तो समझो कि तुम्हारा जीवन सार्थक है, परन्तु यदि तुम सब प्रकारसे धन-सम्पत्ति, मान-यश और लौकिक विद्या-बुद्धिसे भरपूर हुए लेकिन तुम्हारा हृदय भगवत्-प्रेमसे रहित है तो निश्चय समझो कि तुम्हारा जीवन विषयी लोगोंकी दृष्टिमें चाहे जितना ऊँचा हो, बड़े गौरवका हो, परन्तु असलमें वह सर्वथा व्यर्थ है। व्यर्थ ही नहीं, अगले जन्ममें आनेवाले महान् कष्टोंका कारण भी है। अतएव विषयोंसे मनको हटाकर भगवान्‌में लगाओ और मानवजीवनको सफल करो।



कल्याणके साधन

किसी भी प्राणीको किसी प्रकारसे दुःख मत दो। दूसरेको दुखी करके सुखी होनेकी दुराशा छोड़ दो। दूसरेको दरिद्र बनाकर धनी बननेकी लालसा मत रक्खो। पता नहीं तुम कब मर जाओगे। मरते ही तुम्हारे सारे मनके महल ढह जायँगे। यह मनुष्यका भ्रम है कि जो वह अधिक कालतक जीकर भोग भोगने-की आशामें दूसरोंके भोगोंको लूटना या उन्हें मारना चाहता है। मौतको सदा सिरपर सवार देखो और यह निश्चय समझो कि मौत आते ही तुम्हारा कहीं कुछ भी नहीं रहेगा।

× × × ×

मरनेके एक क्षण पहलेतक मनुष्य न मालूम कितने मनसूबे बाँधता है, घरमें उसका एक स्थान है, वह घरका एक मालिक या

हिस्सेदार है; परन्तु जहाँ मौत आयी कि उसके सारे मनसूबे ज्यों-के-त्यों रह जाते हैं, उसका घरमें कहीं भी स्थान नहीं रहता।

× × × ×

घरकी जिन चीजोंको मेरी-मेरी कहते हो, जिन चीजोंको अपनी बनाना चाहते हो, उन सबसे तुम्हें जबरदस्ती अपना सम्बन्ध छोड़ देना पड़ेगा। अच्छी बात इसीमें है कि पहलेसे ही सावधान हो जाओ। और जिन वस्तुओंको आखिर छोड़ना ही है उनके लिये अन्याय, अधर्मका आश्रय लेना छोड़ दो। किसी वस्तुको अपनी मत समझो, किसी वस्तुका अहंकार न करो, किसी वस्तुकी कामना न करो, जगत्में बेपरवाह रहो और मस्त हो जाओ। मस्तीकी मौत भी मौज ही होती है।

× × × ×

धन, नाम, कीर्ति, सम्मान कमानेकी चाह छोड़ दो। कमायी करो अच्छे आचरणोंकी, सद्गुणोंकी, वैराग्यकी, ज्ञानकी और भगवद्भक्तिकी। तुम्हारे पास बहुत धन है, परिवार भी बड़ा है, जगत्में तुम्हारा काफी अच्छा नाम है, लोग तुम्हारे पैर पूजते हैं; परन्तु यदि तुम्हारा अन्तःकरण मलिन है, तुम्हारे आचरण अपवित्र हैं, तुम्हारा मन और शरीर क्षणभंगुर भोगोंमें आसक्त है, तुम भोगोंको ही नित्य सुख और सुखका साधन समझते हो और श्रीभगवान्के चरणोंमें तुम्हारा किञ्चित् भी प्रेम नहीं है तो निश्चय समझ लो, तुम्हारा मनुष्यजीवन बिल्कुल व्यर्थ है और तुम्हारे इस जीवनका फल आगे चलकर तुम्हारे लिये बहुत ही कष्टमय होगा।

× × × ×

सदा अन्तःकरणको पवित्र बनानेमें लगे रहो। अपने

आचरणोंको शुद्ध करो। सबके प्रति प्रेम करो। सबका सत्कार और आदर करो। सबका हित करो, किसीका भी बुरा न चाहो। संसारके क्षणभंगुर भोगोंसे चित्तको हटाकर भगवान्‌में लगाओ। इस बातकी परवा छोड़ दो कि लोग तुम्हें क्या कहते हैं। लोग तो अपने-अपने मनकी कहेंगे। रागद्वेषका चश्मा जैसा होगा वैसा ही कहेंगे। उनकी प्रशंसामें भूलो मत, और उनकी निन्दासे घबराकर अपने लक्ष्यसे हटो मत। सब काम भगवान्‌की प्रीतिके लिये करो, और इस बातका सदा ध्यान रक्खो कि जिस कार्यमें किसी भी प्राणीका अहित है, वह कार्य भगवान्‌की प्रीतिके लिये नहीं हो सकता।

× × × ×

भोगोंकी बातें न अधिक करो, न अधिक सुनो; उनमें जितनी जरूरत हो, उतना ही मन लगाओ और उतनी ही उनके बारेकी बात करो। शेष समय अपने मन और वाणीको भगवान्‌की ओर ही लगाये रक्खो। शरीरसे जो कुछ करो, सब भगवान्‌की सेवा समझकर करो। घरमें अपनेको मालिक मत समझो, वरं एक सेवक समझो, और यथासाध्य ईमानदारीके साथ भगवत्सेवाके भावसे घरके काम करो। अपना व्यवहार दूसरेके घरमें कुछ समयके लिये टिके हुए अतिथिका-सा रक्खो। इस घरको अपना स्थायी घर, घरकी चीजोंको अपनी चीजें, घरके सेवकोंको अपने सेवक, और घरकी सम्पत्तिको अपनी सम्पत्ति मत समझ बैठो। सावधान, तुम्हारे व्यवहारसे किसीके दिलपर चोट न पहुँचे।

× × × ×

चित्तकी धाराका प्रवाह एक भगवान्‌की ओर ही रहे, इस बातके लिये सदा जतन करते रहो; जगत्‌की ओर कहीं मुड़े तो

वह भी भगवान्की ओर जानेके सीधे रास्तेकी खोजमें ही ! कहीं जरा-सी भी गड़बड़ी दीखे तो तुरन्त प्रवाहको उस ओरसे वापस मोड़ लो । याद रक्खो—धन, जन, परिवार, शरीर, यश, सम्मान कुछ भी तुम्हारे साथ नहीं जायँगे । परलोकमें ये तुम्हारे काम नहीं आवेंगे, तुम्हें विपत्तिसे नहीं बचावेंगे । अतएव इनके लिये जीवनको मत गँवाओ । यदि भाग्यवश ये मिल गये तो सावधान रहो, कहीं तुमपर इनका नशा न चढ़ जाय,—तुम कहीं भगवान्के मार्गसे हट न जाओ । इनसे चिपटो मत; मनको सदा इनसे अलग रखनेकी चेष्टा करो, और हो सके तो इनका भी भगवत्प्रीतिमें ही उपयोग करो ।

× × × ×

पता नहीं, शरीरका कब अन्त हो जाय, अतएव सदा तैयार रहो । जिसके आचरण शुद्ध हैं; जिसमें सद्गुणोंका विकास है; जिसका मन घरमें, परिवारमें, भोगोंमें नहीं अटकता; जो मनसे कभी भगवान्को नहीं भूलता और जो शरीरसे अपनेको सदा अलग, चेतन, नित्य और अविनाशी समझता है, बस, वही तैयार है । उसे मृत्युके समय रोना नहीं पड़ता ।

× × × ×

जबतक शरीर स्वस्थ है, भोग भोगनेकी शक्ति है, भोगोंमें मन लगा है, मृत्यु सामने नहीं दिखायी देती, तबतक अवश्य ही बहुतोंको ऊपर लिखी बातें अनावश्यक और कड़वी लग सकती हैं । परन्तु एक दिन सभीको इन बातोंपर विचार करना पड़ता है और पहलेकी भूलका पछतावा उस समय बहुत ही भयानक होता है । पहलेसे ही विचार करके चेत जाओ तो अच्छी बात है ।

× × × ×

धन, यौवन, रूप, पद, सम्मान, शक्ति, विद्या, वाग्मिता, याद रक्खो—मौतका विकराल मुँह दीखते ही ये सब चीजें विध्वंस हो जायँगी । इनसे कुछ भी नहीं होगा । अतएव इनकी प्राप्तिको जीवनका उद्देश्य मत बनाओ, और प्राप्ति होनेपर तनिक भी ऐंठो मत । यह चार दिनोंकी चाँदनी जरूर ही नष्ट हो जायगी ।

× × × ×

शास्त्र, सन्त, महात्मा और भक्तोंकी वाणीका अनुशीलन और अनुसरण कर भगवान्‌पर विश्वास करो; भगवान्‌के महत्त्वको समझो और भगवान्‌के प्रेमको पानेके लिये भगवान्‌की शरण हो जाओ !

× × × ×

काम, क्रोध, लोभ, द्वेष, हिंसा, मत्सर, अभिमान, ममत्व आदि दोष बड़े ही प्रबल हैं, इन सबका समूल नाश करनेका जतन करो । सत्संग या साधनाके प्रभावसे कभी-कभी मनुष्योंको अपनेमें इन दोषोंका अभाव-सा दीखता है और वह अपनेको पूर्ण मान लेता है; परन्तु इनका सर्वथा नष्ट हो जाना कठिन है । दोष दब जाते हैं, परन्तु संस्काररूपसे मनमें छिपे रहते हैं; जो अनुकूल परिस्थिति और उत्तेजक कारण उपस्थित होनेपर जाग उठते हैं । यही कारण है कि सर्वथा निर्दोष समझे जानेवाले पुरुषोंमें भी कभी-कभी इन दोषोंका प्रकाश देखा जाता है ।

× × × ×

अतएव अभिमानसे अपनेको बचाते हुए बड़ी ही सावधानीसे, भगवान्‌के बलका आश्रय लेकर इन दोषोंको समूल नष्ट करनेकी चेष्टा करो । काम, क्रोधादिकी जागृतिका सबल कारण

उपस्थित होनेपर भी जब इनकी जागृति न हो, तब समझना चाहिये कि इनका नाश हो रहा है। संस्काररूपसे भी न रह जायँ, इसके लिये बार-बार आत्मपरीक्षा करके देखना चाहिये।

× × × ×

बहुत बार यह देखा जाता है कि जान-बूझकर की गयी परीक्षामें तो इन दोषोंकी जागृति नहीं होती, परन्तु अकस्मात् कारण उपस्थित होनेपर ये जाग उठते हैं। अतएव वैसी अवस्थामें भी न जागें तभी इनके संस्कारोंका नाश चालू होना समझना चाहिये।

× × × ×

अपने द्वारा कोई अच्छा काम बन जाय तो उसके लिये भूलकर भी अभिमान मत करो। सफलताके लिये भगवान्‌के कृतज्ञ होओ और उन्हींकी शक्तिको सफलतामें कारण समझो। अभिमान सफलताका बहुत बड़ा बाधक है। अभिमान उत्पन्न होते ही सफलता दूर भागने लगती है, और कहीं किसी कारणवश ऐसा होनेमें देर होती है तो उसका परिणाम, अभिमानकी अत्यन्त वृद्धि हो जानेके कारण और भी भयानक होता है।

× × × ×

प्रत्येक सफलतापर भगवान्‌के प्रति कृतज्ञता प्रकाश करके उत्तरोत्तर भगवान्‌का आश्रय लेना और उन्हींपर सब प्रकारसे निर्भर होनेकी स्थिति प्राप्त कर लेना—मनुष्यको उस महान् सफलतापर पहुँचा देता है जहाँ मनुष्य-जीवनकी, नहीं-नहीं, जीव-जीवनकी अनन्त कालकी साध पूरी हो जाती है।

× × × ×

अपनेको उत्तम समझकर न तो कभी अभिमान करो और न कभी दूसरेको बुरा समझकर उससे घृणा करो। जीवनमें न माछूम कितनी बार उत्थान-पतनकी घड़ियाँ आती हैं। जिसका जीवन अन्तिम श्वासतक उत्तम निभ जाय वही उत्तम है और जो जीवनमें कभी न सुधरे वही बुरा है।

× × × ×

अपने जीवनकी ओर सदा चौकन्नी नजरसे देखते रहो, एक-एक कदम बड़ी सावधानीसे सँभलकर रक्खो; गिरनेके लिये जगत्‌में चारों ओर इतने गहरे गड्हे हैं कि जिनकी गिनती ही नहीं हो सकती। जरा-सी असावधानी तुम्हें न माछूम कितनी गहरी खाईमें गिरा देगी। मनकी प्रत्येक क्रिया और इन्द्रियकी हर एक चेष्टाको प्रभुकी ओर लगी रहनेवाली अव्यभिचारिणी बुद्धिके अधीन रक्खो। सावधान, एक क्रिया भी ऐसी न होने पावे जो प्रभुसे विमुख ले जानेवाली और दुष्कर्मके गड्हेमें गिरानेवाली हो।

× × × ×

बुरी वासना और पापबुद्धिपर कभी दया न करो, जरा-सी बुरी वासना और पापबुद्धिको भी कभी हृदयमें आश्रय मत दो। आश्रय पाकर इनके बढ़ते देर नहीं लगती। बढ़ जानेपर फिर ये बे-काबू हो जाती हैं और सारी इन्द्रियोंपर अपना प्रभुत्व फैलाकर मनमानी करती-कराती हैं।

× × × ×

अपनेको भगवान्‌के बलसे बलवान् समझकर कुवासना,

कुचिन्ता और कुबुद्धिको नजदीक भी न आने दो; जोर करें तो लड़कर इनपर विजय प्राप्त करो। स्मरण रक्खो—तुम बड़े बलवान् हो। आत्माके समान शक्तिशाली कोई नहीं है। शरीर, इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि सभी आत्माके गुलाम हैं। तुम आत्मा हो, परमात्माके सनातन अंश हो। मन, बुद्धि और उनमें निवास करनेवाले कामकी ताकत तुम्हारी ताकतके सामने तुच्छ है; बल्कि तुम्हारी ही शक्तिसे उनमें शक्ति आती है। अपनेको परमात्माके सामने दीन समझो; परन्तु विषयबुद्धिके नाश करनेके लिये कभी दुर्बल मत समझो। वास्तवमें ही तुम दुर्बल नहीं हो। तुम्हारे दुर्बलताके निश्चयने ही तुम्हें दुर्बल बना रक्खा है। अपने स्वरूपको सँभालो और निर्भय हो जाओ।

× × × ×

अपनी निन्दा सुनकर न घबराओ, न उत्तेजित होओ, न शोक करो और न धैर्य ही छोड़ो। अहंकारको अलग करके अपनेको देखोगे तो निन्दाका तुमपर कोई असर नहीं दीखेगा। आत्माकी कोई निन्दा कर नहीं सकता; नाम-रूपकी निन्दा-स्तुतिमें कुछ हानि-लाभ नहीं है। जगत्‌में न सबकी सब समय सब निन्दा करते हैं और न स्तुति ही करते हैं। जगत्‌की निन्दा-स्तुतिकी कुछ भी परवा न करके सदा निष्कामभावसे प्रेमपूर्वक निरन्तर ईश्वरकी आज्ञा पालन करनेमें लगे रहो।

× × × ×

तुम परमेश्वरकी आज्ञा समझकर किसी सत्कार्यको करते हो

और वर्तमान जगत्के अधिकांश विद्वान् कहानेवाले लोग भी यदि तुम्हारे उस सत्कार्यके विरुद्ध मत रखते हैं तो कोई चिन्ता नहीं। अपना सत्कार्य कभी मत छोड़ो, परमेश्वरपर भरोसा रखकर अपने कर्तव्यपर डटे रहो। सच्ची बात आखिर सच्ची ही रहेगी। एक दिन दुनिया सत्यको मान लेगी, और यदि न माने तब भी तुम्हारी कोई हानि नहीं है।

× × × ×

दुनियाकी प्रशंसा पानेके लिये, नेतृत्वके लिये, मान या धनके लिये अपना धर्म कभी मत छोड़ो! दुनियाकी प्रशंसासे कुछ भी नहीं बनता। धर्मत्यागका फल बहुत बुरा होगा। आज धर्मत्याग करनेवालोंकी प्रशंसा सुनकर भविष्यके फलसे बेखबर मत होओ।

× × × ×

त्याग करो, परन्तु त्यागका अभिमान न करो। त्यागकी स्मृतिको भी भूल जाओ। दान करो; परन्तु अहसान न करो, बदला न चाहो, उसे भूल जाओ। सेवा करो, परन्तु सेवक मत कहलाओ। जो सेवा करता है और सेवक नहीं कहलाता वही असली सेवा करता है।

× × × ×

सफलतापर कभी गर्व न करो; यह न समझो कि हमारी बुद्धि और शक्तिसे सफलता मिली है। ईश्वरका उपकार मानो और उसीकी शक्तिका प्रभाव समझो एवं दीन होकर ईश्वरसे प्रार्थना

करो—'प्रभो! तुम्हारी इच्छासे होनेवाली सफलताका अभिमान मेरे हृदयमें कभी न उत्पन्न हो, मैं तुम्हारी शक्तिके प्रभावको कभी न भूलूँ।'

× × × ×

विफलतापर कभी शोक न करो, यह न समझो कि प्रभुने बहुत बुरा किया। अपनी भूलोंको ढूँढ़ो, कहीं अभिमान या गर्ववश प्रभुकी शक्तिका अपमान या तिरस्कार तो नहीं कर बैठे हो, यदि ऐसा हुआ हो तो (जरूर हुआ ही होगा) विफलतामें प्रभुकी परम कृपाके दर्शनकर उनसे दीन प्रार्थना करो—'प्रभो! तुमने बहुत अच्छा किया जो मुझे विफलता दी। यदि मैं सफल हो जाता तो मेरा अभिमान और भी बढ़ता एवं मैं तुम्हारी शक्तिका और भी अधिक तिरस्कार करता। अब कृपा करके ऐसी बुद्धि दो जिसमें मैं फिर कभी ऐसी भूल न करूँ।'

× × × ×

प्राणिमात्रके प्रति प्रेम करो, दीन जीवोंपर दया करो, सबके साथ मित्रता और शान्तिपूर्ण बर्ताव करो। सबका आदर करो। अपमान किसीका भी कभी न करो, मनुष्यके लिये अपमानसे बढ़कर अप्रिय वस्तु और कोई नहीं है। स्वयं अमानी बनकर दूसरोंका सम्मान करो।

× × × ×

बदला लेनेकी भावना कभी मनमें मत आने दो। अपना बुरा करनेपर, गाली देनेपर, निन्दा करनेपर, मारनेपर भी किसी-

का कभी न बुरा करो, न बुरा चाहो, न बुरा होते देखकर प्रसन्न होओ, उसको हृदयसे क्षमा कर दो। सबमें अपने आत्माको समझकर, जैसे अपने अपराधपर आप दण्ड नहीं देना चाहता,—क्षमा चाहता है—इसी प्रकार सबपर क्षमा करो। बदला लेनेकी भावना बहुत बुरी है। बदला लेनेकी भावना मनमें रखनेवाला मनुष्य इस जीवनमें कभी शान्ति, सुख और प्रेम नहीं पाता, तथा मरनेपर पिशाच होता है। वह स्वयं डूबता है और वैरभावके बुरे परमाणु वायुमण्डलमें फैलाकर दूसरोंका भी अनिष्ट करता है।

× × × ×

मनमें सदा पवित्र भाव रक्खो; सबका हित चाहो, सबको उत्तम परामर्श दो, कभी न वाणीसे बुरी सम्मति दो, न अपनी करनीसे बुरी बात सिखाओ, और न मनमें बुरी बात रखकर उसे वायुमण्डलमें जाने दो। जो दूसरोंमें बुरे भाव फैलानेमें सहायक होता है वह बहुत बड़ा पाप करता है। उसका कभी हित नहीं हो सकता।

× × × ×

स्मरण रक्खो—जिस कार्यसे परिणाममें अपना और दूसरोंका हित हो वही धर्म है और जिससे परिणाममें अपना और दूसरोंका अहित हो वही पाप है!

तीन बात

तीन बातोंसे सदा बचो—१ अपनी तारीफ, २ दूसरेकी निन्दा और ३ परदोषदर्शन ।

तीन बातें ध्यान रखकर करो—१ ईश्वरका स्मरण, २ दूसरोंका सम्मान और ३ अपने दोषोंको देखना ।

तीन बातें सदा सोचो—१ भगवान्‌का प्रेम कैसे प्राप्त हो ? २ दुखियोंका दुःख कैसे दूर हो ? और ३ हृदय पापशून्य कैसे हो ?

तीन बातोंपर सदा अमल करो—१ सत्य, २ अहिंसा और ३ भगवान्‌का नामजप ।

तीन बातोंसे सदा अलग रहो—१ परचर्चासे, २ वादविवादसे और ३ नेतागिरीसे ।

तीनोंपर सदा दया करो—१ अबलापर, २ पागलपर और ३ राह भूले हुएपर।

तीनोंपर दया न करो—१ अपने पापपर, २ आलस्यपर और ३ उच्छृङ्खलतापर।

तीनोंको सदा वशमें रक्खो—१ मन, २ उपस्थ इन्द्रिय और ३ जीभ।

तीनोंके सदा वशमें रहो—१ भगवान्‌के, २ धर्मके और ३ शुद्ध कुलाचारके।

तीनोंसे सदा मुक्त रहो—१ अहङ्कारसे, २ ममतासे और ३ आसक्तिसे।

तीनसे सदा सच्चे रहो—१ धनसे, २ कालसे और ३ जबानसे।

तीनपर ममता करो—१ ईश्वरपर, २ सदाचारपर और ३ गरीबोंपर।

तीनसे सदा डरते रहो—१ अभिमानसे, २ दम्भसे और ३ लोभसे।

तीनके सामने सदा नम्र रहो—१ गुरु, २ माता और ३ पिता।

तीनसे सदा प्रेम करो—१ ईश्वर, २ धर्म और ३ देश।

तीनको सदा हृदयमें रक्खो—१ दया, २ क्षमा और ३ विनय।

तीनका सदा सेवन करो—१ संत, २ सत्शास्त्र और ३ पवित्र भूमि।

तीनको हृदयसे निकाल दो—१ राग, २ द्वेष और ३ मत्सर।

तीन व्रतोंका पालन करो—१ परस्त्रीसेवनका त्याग, २ परधनका त्याग और ३ असहायोंकी सेवा।

तीन उपवास करो—१ एकादशी, २ पूर्णिमा और ३ अमावस्या।

तीन बातोंमें शङ्का न करो—१ शास्त्रवचन, २ गुरुवचन और ३ शुद्ध मनकी प्रेरणा।

तीनका भरणपोषण करो—१ माता-पिता, २ स्त्री-बच्चे और ३ दीन-दुखी।

तीनका संग छोड़ दो—१ व्यभिचारीका, २ जुआरीका और ३ लबारीका।

तीन प्रकारके लोगोंसे दूर रहो—१ नास्तिकसे, २ माता-पिता-गुरुका द्रोह करनेवालेसे और ३ संत पुरुषोंकी निन्दा करनेवालेसे।

तीनकी दशापर विशेष ध्यान रक्खो—१ विधवा स्त्री, २ अनाथ बालक और ३ दबे हुए तथा अनाश्रित प्राणी।

तीनकी आवश्यकताओंपर विशेष ध्यान दो—१ मूकप्राणी, २ संसारत्यागी संन्यासी और ३ कुछ भी न माँगनेवाले अतिथि।

तीनकी परवा न करो—१ धर्मपालनके लिये कष्टकी, २ दूसरेका कष्ट दूर करनेके लिये धनकी और ३ रोगीकी सेवामें अपने शरीरकी।

तीन आदमियोंको मत रोको—१ दाताको, २ दूसरोंकी सेवा करनेवालेको और ३ जल्दी छूटनेवाली रेलमें चढ़नेकी इच्छावाले मुसाफिरको।

तीन कामोंमें खूब जल्दी करो—१ भजनमें, २ दानमें और ३ शास्त्रके अभ्यासमें।

तीन कामोंको ढीलमें छोड़ दो—१ मुकदमेबाजीको, २ विवादको और ३ किसीके दोषनिर्णयको।

तीन आवेशोंके समय कोई भी क्रिया करनेसे रुक जाओ—१ क्रोधके समय, २ कामवासनाके समय और ३ लोभके समय।

तीनोंका सम्मान करो—१ वृद्धका, २ ब्राह्मणका और ३ निर्धनका।

तीनोंका सदा हृदयसे आदर करो—१ भगवान्के विग्रहका, २ संत-महात्माका और ३ सत्शास्त्रका।

तीनोंके सामने नम्र रहो—१ गुरुजन, २ विद्वान् और ३ राजपुरुष।

तीन कामोंको खूब मन लगाकर करो—१ भजन, २ भगवान्का ध्यान और ३ सत्संग।

तीन आँसुओंको पवित्र मानो—१ प्रेमके, २ करुणाके और ३ सहानुभूतिके।

तीन आँसुओंको अपवित्र मानो—१ शोकके, २ क्रोधके और ३ दम्भके।

तीन बननेसे बचो—१ महन्त, २ दीक्षा देनेवाले गुरु और ३ मालिक।

तीन बननेमें सुख मानो—१ अज्ञात सेवक, २ व्यर्थ निन्दाका पात्र और ३ परसुखके साधन।

तीन बातोंका दुराग्रह न करो—१ सम्प्रदायका, २ वेषका और ३ अपने मतका।

तीन बातोंका सदा सत् आग्रह रक्खो—१ सत्यका, २ धर्मका और ३ सच्चरित्रताका।

तीन कामोंसे कम सम्पर्क रक्खो—१ सभासमिति, २ अखबारनबीसी और ३ दलबंदी।

तीन न बनाओ—१ शिष्य, २ जमात और ३ मठ।

तीन बनाओ—१ धर्मशाला, २ कुआँ और ३ देवमन्दिर।

तीन चीजें लगाओ—१ वृक्ष, २ प्याऊ और ३ अन्नक्षेत्र।

तीनोंसे घृणा न करो—१ रोगीसे, २ आर्त्तसे और ३ नीची जातिवालेसे।

तीनसे घृणा करो—१ पापसे, २ अभिमानसे और ३ अपने मनकी मलिनतासे।

तीन जगह न जाओ—१ वेश्यालय, २ जुवाड़खाना और ३ कलालका घर।

तीन जगह रोज जाओ—१ देवमन्दिर, २ संतकी कुटिया और ३ आजीविकाके स्थान।

तीनसे मजाक न करो—१ अंगहीनसे, २ विधवा या अनाथसे और ३ दीन-दुखी प्राणीसे ।

तीनको प्रतिदिन प्रणाम करो—१ ईश्वर, २ माता-पिता, पति आदि गुरुजन और ३ संत-महात्मा ।

तीन बातोंको मनकी उन्नतिके लिये रोज नियमसे करो—१ स्वाध्याय, २ ध्यान और ३ अपने मानसिक दोषोंका स्मरण ।

तीन बातें स्वास्थ्यके लिये रोज नियमसे करो—१ शुद्ध वायुमें घूमना, २ नियमित आहार-विहार और ३ कुपथ्यका त्याग ।

तीन चीजोंसे ज्ञान मिलता है—१ श्रद्धा, २ तत्परता और ३ इन्द्रियसंयम ।

तीन नरकके दरवाजोंमें कभी मत घुसो—१ काम, २ क्रोध और ३ लोभ ।

तीन आवश्यक साधन करो—१ समता, २ संयम और ३ सब प्राणियोंके हितकी चेष्टा ।

तीनको गुरु न बनाओ—१ स्त्रीसेवीको, २ धनके लालचीको और ३ दाम्भिकको ।

तीनका चिन्तन न करो—१ स्त्रीका, २ धनका और ३ नास्तिकका ।

तीनका चिन्तन नित्य करो—१ भगवान्‌का, २ संतवाणीका और ३ सदाचरणका ।

तीन मुख्य साधन करो—१ वैराग्य, २ अभ्यास और ३ भगवान्‌की कृपापर विश्वास ।

तीन महान् शक्तियोंका आश्रय ग्रहण करो—१ भगवान्‌की शरणागति, २ भगवत्कृपा और ३ आत्मशक्ति।

तीनपर विश्वास करो—१ भगवान्‌की दयापर, २ आत्माकी शक्तिपर और ३ सत्य शुद्ध आचरणपर।

तीनपर आस्था न करो—१ कूटनीतिपर, २ दुराचारपर और ३ असत्यपर।

तीन बातोंको भूल जाओ—१ अपने द्वारा किया हुआ किसीका उपकार, २ दूसरेके द्वारा किया हुआ अपना अपकार और ३ धन-मान-साधन आदिके कारण अपनी ऊँची स्थिति।

तीन बातोंको याद रक्खो—१ अपने द्वारा की हुई दूसरेकी बुराई, २ दूसरेके द्वारा किया हुआ अपना उपकार और ३ धन-मान-जीवन आदि सब अनित्य और विनाश होनेवाले हैं यह निश्चय।

तीन न बनो—१ कृतघ्न, २ दाम्भिक और ३ नास्तिक।

तीन बनो—१ नम्र, २ सरल और ३ ईश्वरमें विश्वासी।

तीनका आश्रय करो—१ ईश्वरका, २ महात्माका और ३ अभिमानरहित पुरुषार्थका।

तीन बातोंको मत देखो—१ अपने गुण, २ दूसरोंके दोष और ३ जीवोंकी रतिक्रीड़ा।

तीन बातोंको देखो—१ अपने दोष, २ दूसरोंके गुण और ३ महात्माओंके त्यागपूर्ण आदर्श आचरण।

तीनका खण्डन न करो—१ दूसरेके इष्टका, २ दूसरेके शास्त्रका और ३ अपने निश्चयका।

तीनका मण्डन न करो—१ केवल प्रारब्धका, २ अकर्मण्यताका और ३ शास्त्रविरोधी आचरणका।

तीन प्रकारके वचन बोलो—१ सत्य, २ हितकारी और ३ मधुर।

तीन प्रकारके वचन न बोलो—१ असत्य, २ अनिष्ट करनेवाले और ३ कड़ुए।

तीन बातोंके लिये जबान खोलो—१ भगवत्-गुणानुवाद, २ आवश्यक सत्य वचन और ३ परोपकार।

तीनसे सदा स्नेहपूर्ण बर्ताव करो—१ अपनी पत्नीसे, २ अपने अधीनस्थ कर्मचारियोंसे और ३ गरीबोंसे।

तीनकी सेवामें अपना सौभाग्य समझो—१ माता-पिताकी, २ संत-महात्माकी और ३ दुखी जीवोंकी।

तीनकी सेवामें आवश्यकता होनेपर कभी संकोच न करो—१ मित्रकी, २ अपनी पत्नीकी और ३ अतिथिकी।

तीन बातोंको गुप्त रक्खो—१ साधन, २ धन और ३ मैथुन।

तीन बातोंको प्रकट कर दो—१ अपने पाप, २ दूसरेके गुण और ३ परोपकारके साधन।

तीन बातोंको मत खोलो—१ पराया छिद्र या ऐसी बात जिससे किसीका अनिष्ट होता हो, २ अपने पुण्यकी बात और ३ गुप्त शुभ मन्त्रणा।

तीनोंको सिर चढ़ाकर सुखी होओ—१ महापुरुषों और भक्तोंकी चरणरज, २ तीर्थजल और ३ अपनी निन्दा।

तीनको पाकर कभी न फूलो—१ मान, २ परनिन्दा और ३ अपनी बड़ाई।

तीनकी कामनामें न फँसो—१ धन, २ पुत्र और ३ सम्मान।